नाटक—पात्र

१-अर्हद्दत्त — राजग्रही नगरी का राजश्रेष्टी (यह ऋषभदत्त नामसे भी प्रसिद्ध था)

२-जिनमती — अर्हद्दत्त की स्त्री, जम्बुकुमार की माता (यह धारिणी नामसे भी प्रसिद्ध थी)

३-जम्बुकुमार — अर्हद्दत्त श्रेष्ठी का पुत्र और नाटक का नायक

४-विद्युत्प्रभ ...... एक चोर

५-सागरदत्त (महीपाल)
६-कुबेरदत्त
७-वैश्रवणदत्त
८-श्रीदत्त
— जम्बुकुमार के श्वसुर (राजग्रही के ४ श्रेष्टी)

९-पद्मश्री ... ... सागरदत्त श्रेष्टी की पुत्री
१०-कनकश्री ... ... कुबेरदत्त श्रेष्टी की पुत्री
११-विनयश्री ... ... वैश्रवणदत्त श्रेष्ठी की पुत्री
१२-रूपश्री ... ... श्रीदत्त श्रेष्टी की पुत्री
— जंबुकुमार की स्त्रियाँ

१३-श्रीसुधर्माचार्य ... जम्बुकुमार के दीक्षागुरु

इनके अतिरिक्त अन्य पात्र — सूत्रधार, नटी, विदूषक, फक्कड़, फक्कड़ के दो चेले, सिपाही, दरबान

ॐ

श्री जिनाय नमः

श्री जम्बूकुमार का संक्षिप्त परिचय

(श्री उत्तरपुराण और कई श्री जम्बूस्वामी चरित्रों के आधार पर)

१. जन्म—मगधदेश (सूबा बिहार) की प्राचीन राजधानी "राजगृही" नगरी के एक सुप्रसिद्ध राजश्रेष्ठी अर्हद्दत्त (अर्हद्दास) की धर्म पत्नी जिनमती (जिनदासी) के गर्भ से वीर निर्वाण काल से लगभग २२ वर्ष पूर्व (विक्रम जन्म से ४९२ वर्ष पूर्व या विक्रम सम्वत् से लगभग ५१० वर्ष पूर्व) शुभ मुहूर्त्त में इनका जन्म हुआ। उस समय मगधदेश में महाराजा "श्रेणिक बिम्बसार" का राज्य था। इनके शरीर का संस्थान "समचतुरस्र" और संहनन "वज्रवृषभ नाराच" था। बाहुबली आदि २४ कामदेवों में से यह अन्तिम कामदेव अर्थात् अपने प्राकृतिक रूप लावण्य में अद्वितीय थे।

२. विद्याध्ययन—जब इनकी वय लगभग ५ वर्ष की हुई तो पिता ने एक "विमल" नामक सुयोग्य उपाध्याय द्वारा

इनका विद्याध्ययन संस्कार यथाविधि शुभ मुहूर्त में कराया। पूर्व जन्म के उत्तम संस्कार से यह अपनी अद्वितीय स्मरण शक्ति और बुद्धिपटुता से केवल ५ ही वर्ष में थोड़े ही परिश्रम से व्याकरण, न्याय, गणित, छन्द, अलंकार आदि विद्याओं का अध्ययन करके प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग, इन चारों ही अनुयोगों के शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता होगये।

३. साहस और पराक्रम—बुद्धि परायणता और आत्मबल के साथ साथ इनमें शारीरिक बल भी केवल १० वर्ष की वय से ही दिन प्रतिदिन असाधारण उन्नति करता चला गया। एक समय जब मगधनरेश महाराजा श्रेणिक बिम्बसार का पट्टबन्ध हाथी अचानक बिगड़ कर नगर में भारी उपद्रव करने लगा और राजा के बड़े बड़े सामन्तों के भी वश में न आया तो इन्होंने ही जब कि इनकी वय केवल १२ या १३ वर्ष के लगभग थी उसे अपनी चतुराई से बड़ी सुगमता से वश में कर लिया, जिससे सारे नगर और देश में इनके साहस, बल, पराक्रम और बुद्धिमानी की बड़ी प्रशंसा हुई और राज दरबार में उन्होंने बड़ा सन्मान पाया।

पश्चात् उसी नगर के सेठ सागरदत्त की पद्मावती नामक स्त्री के उदर से उत्पन्न पुत्री "पद्मश्री", सेठ कुबेरदत्त की कनकमाला नामक स्त्री के गर्भ से उत्पन्न पुत्री "कनकश्री", सेठ

वैश्रवणदत्त की विनयवती नामक स्त्री के गर्भ से जन्मी पुत्री "विनय श्री" और सेठ श्रीदत्त की धनश्री नामक पत्नी से जन्मी पुत्री "रूपश्री" इन चार कन्याओं के साथ इस कुमार के पाणिग्रहण किये जाने का वाक्दान होजाने पर कुछ दिन पीछे इस कुमार ने राजा श्रेणिक की ओर से कुछ सेना सहित "केरल-पुर" जाकर वहां के राजा 'मृगाङ्क' के शत्रु राजा 'रत्नचूल' नामक विद्याधर को जो केरल नरेश की पुत्री (श्रेणिक की मांग) 'विलासवती" को बलात् विवाहना चाहता था युद्ध में बड़ी वीरतासे लड़कर परास्त किया और अपनी असाधारण चतुरता से उसे बांध कर मृगाङ्क का मित्र बना दिया। तत्पश्चात् वहां भी बड़ा सन्मान पाकर "विलासवती", मृगाङ्क, रत्नचूल और उसके अनेक सामन्त आदि सहित राजगृही को लौट आया जहां महानोत्सव के साथ मृगाङ्क ने अपनी पुत्री विलासवती का विवाह महाराजा श्रेणिक के साथ करदिया।

४. विषयभोगों से विरक्तता—महाराजा "श्रेणिक" की अकाल मृत्यु के पश्चात् जब उसका पुत्र 'अजात शत्रु कुणिक' मगध का अधिपति था तो एक दिन "श्रीसुधर्माचार्य" विहार करते हुए इधर आ निकले और राजगृही के उपवन में आकर विराजे। "जम्बू कुमार" ने उनके मुखारविन्द से धर्मोपदेश सुना। संसार की असारता का वास्तविक रूप इन

कुमार के पवित्र आत्मा पर तुरन्त इदयाङ्कित हो गया जिससे सांसारिक विषय भोगों और सर्व धनसम्पत्ति को बन्धन का कारण जान कर तुरन्त चित्त में उदासीनता छागई और मुनि-दीक्षा ग्रहण करने के लिये पूज्य आचार्य से बड़ी विनय के साथ प्रार्थना की। आचार्य ने तुरन्त दीक्षा न दी, किंतु माता पिता से आज्ञा मांगने की शिक्षा दी।

५. पाणिग्रहण (विवाह)—गुरु आज्ञानुसार जब घर आकर माता पिता से दिगम्बरी दीक्षा-ग्रहण करने की सविनय आज्ञा मांगी तो माता पिता और चारों श्वसुरों ने अपनी शक्तिभर बहुत कुछ समझाकर रोकने का भरसक प्रयत्न किया। समझाना व्यर्थ जाता देखकर यह भी वचन दिया कि "विवाह के पश्चात् सन्तानोत्पत्ति होने पर यदि तुम दीक्षा ग्रहण करोगे तो हम भी तुम्हारे साथ दीक्षित होंगे"। जब कुमार ने यह बात भी स्वीकृत न की और चारों कन्याओं का भी यह विचार देखा कि वे जम्बूकुमार के अतिरिक्त अन्य किसी को अपना पति स्वीकृत न करेंगी, किन्तु किसी न किसी प्रकार विवाह हो जाने पर वे उस कुमारको अपने प्रेमबन्धन में बाँधकर दीक्षित होनेसे रोक सकेंगी तो इस आशा से कि कदाचित् ये कन्यायें अपने प्रयत्न में सफल-मनोरथ होकर हमारी चिन्ताओंको मिटा सकें माता पिता और चारों श्वसुरों ने एक मत होकर कुमार को यह प्रवन्ध किया कि "यदि तुम्हारी ऐसीही इच्छा है तो इस समय विवाह तो कर

लो, फिर यदि तुम चाहोगे तो विवाह के पश्चात् जब तुम्हारी इच्छा होगी तुम्हें दीक्षा ग्रहण करने की आज्ञा मिल जायगी और विवाह का प्रबन्ध भी हम अभी शीघ्र किये देते हैं।" यह वचन ले कर कुमार ने इच्छा न होने पर भी अपने गुरुजन की वारम्वार की इस नम्र आज्ञाको सर्वथा लोपनेका साहस न करके अन्त में शिरोधारण कर लिया। अतः शीघ्र ही विवाह सम्बन्धी कार्योंका प्रबन्ध होकर चारों कन्याओं के साथ एक ही संग एक ही मंडप में इनका पाणिग्रहण हो गया॥

६. दीक्षा—चारों स्त्रियां, माता पिता, और विद्युत्चोर नाम से प्रसिद्ध एक राजपुत्र, इन सबके पूर्ण प्रयत्न पर भी इन्होंने जब अपने दृढ़ विचार को न बदला तो अन्त में माता पिता को अपने पूर्व वचनानुसार आज्ञा देते ही बनी। विवाह से अगले ही दिन मगधनरेश अजातशत्रु-कुणिक (विम्बसार श्रेणिक का पुत्र) और एक "अनावृत" नामक यक्ष आदि अनेकप्रतिष्ठित महानुभावों द्वारा दीक्षा के लिए अभिषेक किया जाकर और पालकी में आरूढ़ होकर सर्व स्वजन आदि के साथ, यह राजगृही के बाहर विपुलाचल पर्वत पर पहुँचे। यहां "श्री गौतम स्वामी केवली" (जो उस समय से दो वर्ष पूर्व तक "श्री महावीर भगवान" के मुख्य गणधर थे) की वन्दना करके फिर 'श्री सुधर्माचार्य' गुरु के पास जाकर वीर निं० सं० २ में जब कि इनकी वय २४ वर्ष की थी दीक्षित होगये॥

माता और चारों स्त्रियों ने आर्यिका के व्रत ग्रहण किये। पिता अर्हद्दत्त ने और विद्युत्चोर ने अपने ५०० शिष्यों सहित मुनि दीक्षा ली। इस सुअवसर पर अनेक अन्य स्त्री पुरुषों ने भी यथाशक्ति व्रत नियम आदि ग्रहण किये।

७. पूर्ण श्रुतज्ञान की प्राप्ति—६ वर्ष से कुछ अधिक के उग्र तपोबल से वीर नि० सं० १२ में "श्री जम्बू स्वामी मुनि" को पूर्ण श्रुतज्ञान-ऋद्धि की प्राप्ति होगई अर्थात् यह 'श्रुतकेवली' होगये।

जिस दिन ये श्रुतकेवली हुए उसी दिन इनके दीक्षा-गुरु "श्री सुधर्माचार्य" को लोकालोक प्रकाशक "कैवल्यज्ञान" (सर्वज्ञता, त्रिकालदर्शिता, लोकालोक व्यापी पूर्ण ज्ञान) प्राप्त हुआ और "श्री गौतम स्वामी" केवली को लगभग ६२ वर्ष की वय में निर्वाणपद प्राप्त हुआ।

८. कैवल्यज्ञान (सर्वज्ञपद)-श्रुतकेवली-पद प्राप्ति के पश्चात लगभग १२ वर्ष के घोर महान तपोबलसे समस्त घातिया कर्मों को नाश कर वीर नि० सं० २४ की ज्येष्ठ शु० ७ के दिन मघा नक्षत्रमें लगभग ४५ वर्ष की वय में इन्होंने "कैवल्यज्ञान" प्राप्त कर लिया।

जिस दिन "श्री जम्बू स्वामी श्रुतकेवली" को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई उसी दिन इनके दीक्षागुरु "श्री सुधर्माचार्य केवली" को निर्वाणपद प्राप्त होगया।

९. निर्वाण—केवल ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् लगभग ४० वर्ष तक "भव" नामक एक मुख्य शिष्य सहित अनेक भव्य प्राणियों को धर्मोपदेश देकर श्रीवीर निर्वाण सम्वत् ६२ में लगभग ८४ वर्ष की वय में शेष अघातिया कर्मों को भी निर्मूल करके "मथुरापुरी" के उद्यान से अविनाशी अजरामर मोक्षपद प्राप्त कर लिया।

मथुरा के चौरासी नामक प्रसिद्ध स्थान के एक जिनालय में इनके चरण चिह्न अद्यापि पूजे जाते हैं। और इनकी निर्वाणपद-प्राप्ति की स्मृति में प्रतिवर्ष कार्तिक कृ० १ से ८ तक आठ दिन बराबर जिन रथोत्सव पूर्वक पूजन भजन शास्त्रोपदेश आदि का भारी महोत्सव बड़े समारोह के साथ होता है।

१०. माता पिता आदि की गति—अपनी अपनी आयु के अन्त में अपने अपने तपश्चरण के अनुसार श्री जम्बू स्वामी के माता पिता ने छठा 'लान्तव' नामक स्वर्ग, चारों स्त्रियों ने १६ वाँ 'अच्युत' नामक स्वर्ग और विद्युत चोर ने उग्र तपोबल से इन सर्व से उच्च "सर्वार्थसिद्धिपद" मथुरा के उद्यान से प्राप्त किया। इनमें से विद्युत चोर तो केवल एक ही मनुष्य-जन्म लेकर निर्वाणपद प्राप्त कर लेगा और शेष सब कई कई शुभ जन्म धारण करके शीघ्र मुक्तिपद पावेंगे।

११. जम्बू स्वामी के कुछ पूर्व भव-(१) यह भव से अपने पाँचवें पूर्व भव (पूर्व जन्म) में मगधदेशान्तर्गत वर्द्धमानपुर (बंगाल प्रान्त में वर्द्धवान नामक नगर) में एक "राष्ट्रकूट" नामक द्विज की "रेवती" नामक स्त्री के गर्भ से उत्पन्न "भवदेव" (भवदत्त) नामक पुत्र था। एक "सुस्थित" नामक जैन मुनि के उपदेश से इसका बड़ा भाई भावदेव (भावदत्त) जब दिगम्बर-मुनि होगया तो अपने इस बड़े भाई के उपदेश और प्रेरणा से यह "भवदेव" भी अपनी नव विवाहिता 'नागश्री' नामक स्त्री को ऊपरी मन से त्याग कर मुनि बन गया। कुछ वर्ष पीछे जब अपनी स्त्री के आर्यिका होजाने के समाचार ज्ञात हुए तब स्त्री की ओर से अपने मनोविकार को सर्वथा दूर करके और सत्य मनसे सब भोगोपभोगों से विरक्त होकर गुरु के सन्मुख अपने मानसिक दोषों की सविनय आलोचना की, और गुरु की आज्ञानुसार "दीक्षाछेद" नामक प्रायश्चित्त लेकर फिर से शुद्ध भाव पूर्वक मुनिदीक्षा ली।

(२) तत्पश्चात् से "भवदेव" और भावदेव दोनों ही भाइयों ने आयु के अन्त में शरीर छोड़कर "महेन्द्र" नामक चौथे स्वर्ग में "बलभद्र" विमान में उत्पन्न कर जन्म लिया और लगभग ७ सागरोपम काल की वहां आयु पाई।

(३) इस प्रकार महेन्द्र स्वर्ग के ७ सागरोपम काल तक सुख भोग कर आयु पूर्ण होने पर पूर्व विदेह में पुष्कलावती देश की

पुण्डरीकिणी नगरी में वज्रदन्त चक्री की यशोधरा रानी के उदर से बड़े भाई भावदेव के जीव ने जन्म लेकर "सागरदत्त" नाम पाया और उसी पुष्कलावती देश की वीतशोका नगरी के महापद्म नामक राजा की वनमाला नामक रानी के गर्भ से छोटे भाई "भवदेव" के जीव ने जन्म लेकर "शिवकुमार" नाम पाया। अवसर पाकर सागरदत्त ने तो श्री अमृतसागर तीर्थङ्कर के सन्मुख मुनिदीक्षा ग्रहण की और शिवकुमार ने अपने बड़े भाई के जीव से अर्थात् इन ही सागरदत्त मुनि से अपने पूर्व भव सुन कर मुनि दीक्षा लेनी चाही। परन्तु माता पिता के रोकने पर मुनिव्रत तो न लिये, किंतु उनकी आज्ञानुसार घर में रहकर ही क्षुल्लक-व्रत पालन किये। प्रत्येक उपवास के पश्चात् केवल आचाम्ल आहार लेलेकर इसने ६४ सहस्र पारणे किये और इस प्रकार दीर्घ काल तक घोर तप किया। इस राजकुमार के साथ २ इसका एक "दृढ़धर्म" नामक मित्र भी गृहत्यागी होकर व्रतोपवास और तपश्चर्या करता हुआ निरन्तर धर्म ध्यान में अपना जीवन काल बिताता था और यथा आवश्यक इसकी वैयावृत्य में लगा रहता था॥

(४) श्री सागरदत्त मुनि (बड़े भाई भावदेव का जीव) ने आयु के अन्त में समाधि-मरण पूर्वक शरीर त्याग कर उग्र तपोबल से "ब्रह्मोत्तर" नामक छटे स्वर्ग में जन्म लिया और "शिव कुमार" ने क्षुल्लक (छोटे भाई "भवदेव" का जीव) "ब्रह्म" नामक

पाँचवें स्वर्ग के ब्रह्महृदय नामक विमान में जन्म लेकर "विद्युन्माली" नामक देव हुआ।"

इस विद्युन्माली देव की "प्रियदर्शना, सुदर्शना, विद्युत्प्रभा और विद्युद्वेगा" नामक चार मुख्य देवियां थीं जो अपने पूर्व जन्म में चम्पापुरी के एक "सूर्यदत्त" नामक सेठ की स्त्रियां थीं। इन स्त्रियों ने अपने पति को दुर्भाग्यवश वातरोग उत्पन्न होजाने और उसके हाथसे अपने नाक कान काट लिये जानेपर आर्यिका के व्रत ग्रहण कर लिये जिस से पुण्योपार्जन कर यह पंचम स्वर्ग के इस विद्युन्माली देव की मुख्य देवियां हुईं।

(४) आयु के अन्त में बड़े भाई भावदेव का जीव छटे स्वर्ग से च्युत होकर 'कोल्लाग' स्थान निवासी अग्निवैश्यायन गोत्री 'धम्मिल' नामक ब्राह्मण की "भद्रिलामय" नामक स्त्री के गर्भसे "सुधर्म" नाम का पुत्र हुआ जो मुनि दीक्षा लेकर अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर भगवान का पंचम गणधर हुआ जिसने "श्री सुधर्माचार्य" नाम से प्रसिद्ध होकर श्री वीर नि० सं० १२ में केवल ज्ञान और फिर लगभग १२ वर्ष पश्चात् वीर नि० सं० २२ में १०० वर्ष की वय में मोक्ष पद प्राप्त किया।

ब्रह्म नामक पंचम स्वर्ग से आयु पूर्ण करके छोटे भाई 'भवदेव' का जीव "विद्युन्माली देव" राजगृही नगरी में अर्हद्दत्त सेठ की जिनमती स्त्री के गर्भ से "जम्बूकुमार" नामक पुत्र हुआ

जिसने अपने पूर्व जन्म के भावदेव नामक बड़े भाई के जीव "श्री सुधर्माचार्य" से दीक्षा लेकर वीर निं०सं०६२ में निर्वाणपद पाया। इसकी ब्रह्म स्वर्ग की चारों देवियां वहां की आयु पूर्ण करके राजगृही में चार सेठ-पुत्रियां हुईं जो इस अन्तिम भव में इस कुमार को विवाही गईं और जिन्होंने आर्यिका के व्रत ग्रहण करके १६ वां स्वर्ग प्राप्त किया।

१२. विद्युत् चोर का परिचय—यह विद्युत् चोर उपर्युक्त शिवकुमार क्षुल्लक (जो तीसरे जन्म में जम्बूकुमार हुआ) के गृहत्यागी मित्र "दृढ़धर्म" का जीव था जो समाधि-मरण पूर्वक शरीर परित्याग कर विद्युन्माली के पास ही पंचम स्वर्ग में जन्मा था और वहां की आयु पूर्ण करके सुरम्य देशस्थ पोदनपुर * नरेश 'विद्युद्राज" की रानी विमलमती के गर्भ से उत्पन्न हुआ। इसका नाम 'विद्युत्प्रभ" था। कुसंगवश बालवय से ही इसे चोरी की लत कुछ ऐसी पड़ गई कि युवावस्था में पहुँच कर अपने बहुत से साथियों के साथ निःशङ्क बड़े बड़े चोरी के

* सुरम्य देश अर्बुदंदेश अर्थात् अरबदेश के उत्तर पश्चिमी विभाग का प्राचीन नाम है जो आजकल सीरिया, फलस्तीन, अल हज़ाज आदि विभागों में विभाजित है और जिस में यरूसलम, दमश्क़, बालबक, अकाबा, मदीना, मक्का आदि नगर आबाद हैं। "पोदनपुर" का नवीन नाम मक्का है, जो अरब देश की राजधानी है।

काम करने लगा जिस से इसका नाम विद्युत् चोर प्रसिद्ध होगया। ज्ञात होने पर पिता आदि गुरुजनने सब कुछ समझाया और डाँटा पर इसने किसी की एक न सुनी। तब पिता ने देश से निकल जाने की आज्ञा देदी। यह अपने ५०० साथियों सहित पिता के राज्य से निकल कर और राजगृही नगरी में आकर एक "कमला" नामक वैश्या के घर रहा और नगर में तथा आस पास के अन्य स्थानों में चोर कर्म करता रहा। जिस रात्रि को जम्बूकुमार की स्त्रियां और माता पिता उसे मुनि दीक्षा ग्रहण करने से रोकने का प्रयत्न कर रहे थे उसी रात्रि को यह विद्युत चोर चोरी करने के विचार से अर्हद्दत्त सेठ के महल में पहुँचा। परन्तु वहां सबको जागृत देख कर यह अपना कार्य न कर सका किन्तु जम्बूकुमार की माता को शोक से अति व्याकुल पाकर और अपनी अटूट धन सम्पत्ति से पूर्ण विरक्त जम्बूकुमार के साधु होजाने के शोक समाचार माता के अति उदास मुख से सुन कर यह अपने चोर कर्म को भूल गया। तब ही मन में अपनी कृतिको बारम्बार धिक्कारा और अति करुणान्वित होकर माताके सम्मुख यह प्रण किया कि मैं कुमार को समझा कर अवश्य रोक लूंगा। और यदि मैं यह कार्य न कर सकूँगा तो मैं भी उन ही का साथी बनूंगा। यह सुन कर माता ने कार्य सिद्ध होने पर इस विद्युत् चोर को अपनी अर्द्ध सम्पत्ति देने का सहर्ष वचन दिया।

विद्युत् चोर (विद्युत्प्रभ) ने कुमार को मुनिदीक्षा से रोकने का भरसक प्रयत्न किया पर वह सफल मनोरथ न हुआ। अतः अपनी प्रतिज्ञानुसार जम्बूकुमार के साथ अपने लगभग ५०० मित्रों सहित इसने भी दिगम्बरी दीक्षा ग्रहण कर ली। महान तपोबल से अनेक पूर्व-संचित कर्मों की निर्जरा की और मथुरा के उद्यान में किसी राक्षस कृत घोर उपसर्ग सहन कर संन्यासमरण पूर्वक शरीर परित्याग किया, जिससे "सर्वार्थसिद्धि" नामक कल्पातीत विमान में जन्म लेकर अहमिन्द्र पद प्राप्त किया, और ३३ सागरोपम काल पर्यंत आत्मविचार और परमानन्द में मग्न रहकर यह केवल एक मनुष्य जन्म धारण कर निर्वाणपद पायगा।

१२. अनावृत यक्षदेव का परिचय—यह जम्बूकुमार के लघुपितृव्य अर्थात् पिता के छोटे भाई "रुद्रदास" का जीव था जो मरकर यक्षदेव उत्पन्न हुआ था। रुद्रदास कुसंगवश सप्त-व्यसनी होगया था। एक बार जब अपना सर्व धन जुए में हार गया और ऋण लेकर पराया धन भी जुएही में खो बैठा तो ऋण न चुका सकने पर ऋणदाताओं ने उसे अति तंग किया और मारा पीटा। तब बड़े भाई अर्हद्दास ने सर्व ऋण चुकाकर उसे ऋण मुक्त किया और प्राणान्त समय समाधिमरण कराया जिस से वह शरीर छोड़कर व्यन्तर जाति के देवों में यक्ष कुल का देव हुआ। जम्बूकुमार के मुनिव्रत धारण करने के समय यह यक्ष भी कुमार का अभिषेक कराने और पालकी उठाने में बड़े हर्ष के साथ सम्मिलित हुआ था और इसी अवसर पर इसे सम्यक् दर्शन का लाभ भी हुआ था।

१४ जम्बूकुमार की आयु विभाग का सारांश ।

(१) जम्बूकुमार का जन्म...वीर निर्वाण से २२ वर्ष पूर्व
(विक्रम सं० से ५१० वर्ष पूर्व)

(२) जम्बूकुमार का विवाह और दीक्षा...वीर नि० सं० २

(३) जम्बूकुमार का श्रुतकेवलि पद......वीर नि० सं० १२

(४) जम्बूकुमारका कैवल्यज्ञान...वीर नि०सं०२३ ज्येष्ठ शु०७

(५) जम्बूकुमार का निर्वाण...वीर नि० सं०६२ कार्तिक कृ०

नोट१-कई हिंदी भाषाके जम्बूकुमार चरितोंमें विद्युत्चोर को हस्तिनापुर नरेश ' दुरछन्द ' का पुत्र बतलाया है। जम्बूकुमार की चारों स्त्रियों को शरीर त्याग कर छटे स्वर्ग जाना, जम्बूकुमार के पूर्व भव के शिवकुमार क्षुल्लकका छटे स्वर्ग जाना, और भवदेव और भावदेव का तीसरा स्वर्ग जाना लिखा है। श्रुतावतार कथा में जम्बूकुमार का केवल ज्ञान प्राप्ति से निर्वाण प्राप्ति तक का समय ३८ वर्ष लिखा है।

नोट २—श्वेताम्बर आम्नाय के ग्रन्थों में जम्बूकुमार के पिता का नाम 'ऋषभदत्त' और माताका नाम 'धारिणी' बताया है। जम्बूकुमार की स्त्रियों की संख्या ८ है। और चोर का नाम प्रभव है दीक्षा १६ वर्ष की वय में लेना, २० वर्ष तप करना, ४४ वर्ष केवल ज्ञानी रहना और इस प्रकार ८० वर्ष की वय में वीर नि० सं० ६४ में निर्वाण पद पाना लिखा है। इत्यादि और भी कई बातों में अन्तर है ॥ इति ॥

बिजनौर,
१ जून १९२६ ई०

चैतन्य—'बुलन्दशहरी'

* ॐ *

श्री जिनाय नमः

श्री जम्बूकुमार नाटक

पहला अङ्क—पहिला दृश्य

पूर्वाभास

(नटाचार्य गाता हुआ आता है)

जिनमत की पूर्व अवस्था का सुमरण कर नित रोना है ।
वीरो! अब भी नहिं चेतो तो नर जन्म व्यर्थ खोना है ॥१॥

हुए युद्ध वीर बलवान इसी जिनमत में ।
जिन जये काम के बान इसी जिनमत में ॥२॥

अरु धर्मवीर अमलान इसी जिनमत में ।
जिन महावीर भगवान इसी जिनमत में ॥३॥

दौलत सम्पति की खान इसी जिनमत में ।
हुए धन कुबेर धनवान इसी जिनमत में ॥४॥

जिन दिया अपरिमित दान इसी जिनमत में।
तज धन बलादि अभिमान इसी जिनमत में ॥५॥
लिया स्वपर रूप पहिचान; हुआ सन्मान, त्याग अभिमान,
किया तप ध्यान, तरे बहु वीर ज्ञान की आन में।
यूँ पाप मैल, धोना है ॥६॥
जिनमत की पूर्वोन्नति का अब सुमरण कर नित रोना है।
हे मित्रो! अब भी चेतो जागो जीलो जो जीना है ॥७॥
हैं सब विद्या की खान इसी जिनमत में।
बहु हुए परम विद्वान इसी जिनमत में ॥८॥
किया महा उग्र तप ध्यान इसी जिनमत में।
उन किया आत्म-कल्याण इसी जिनमत में ॥९॥
अरु पाकर केवलज्ञान इसी जिनमत में।
पा लिया स्वपद निर्वाण इसी जिनमत में ॥१०॥
हुए ऐसे बहु गुणवान इसी जिनमत में।
जिन पाया पूज्यस्थान इसी जिनमत में ॥११॥
हैं उन्हीं की हम सन्तान, बने अज्ञान, नहीं धनवान, सहें अपमान,
हाय! सोये प्रमाद की नींद में,
नहिं जानें क्या होना है ॥१२॥
सब खोया अरु खोना है।
नित दुःख भार ढोना है।
अरु पाप-बीज बोना है ॥१३॥

उन्नत जिनमत की अवनति को हा ! देख देख रोना है।
वीरो ! अब भी आँखें खोलो जोलो जो कुछ जोना है। १४।

है अटल पूर्ण विज्ञान इसी जिनमत में।
होवे सबका कल्याण इसी जिनमत में ॥ १५ ॥

सर्व दूर होय अज्ञान इसी जिनमत में।
होता है सम्यग्ज्ञान इसी जिनमत में ॥ १६ ॥

धारण कर धर्म्मध्यान इसी जिनमत में।
ध्याकर के शुक्लध्यान इसी जिनमत में ॥ १७ ॥

क्रम से होता उत्थान इसी जिनमत में।
मिलता निश्चय शिवथान इसी जिनमत में ।१८।

भवि ! पाकर तत्वज्ञान, सत्य श्रद्धान, मेट अज्ञान, करो उत्थान,
नित्य परमात्म-रूप को ध्याय के,
अब करलो जो करना है ॥ १९ ॥
इक दिन सबको मरना है,
भगवत् ही की शरणा है ॥ २० ॥

"चैतन्य" वीर-उपदेश से अब लेलो जो लेना है।
नर-जन्म अमौलिक रत्न को नहिं पाकर खो देना है ।२१।

[सूत्रधार नान्दी पाठ (मंगलाचरण) पढ़ता हुआ आता है]

सूत्रधार--

विघ्न हरण मंगल करण, अजर अमर पद दाय।
हाथ माथ धर प्रभु चरण, यजन करूं शिर नाय ॥ १ ॥
रीझ रीझ पर वस्तु पे, आत्मरूप विसराय।
लालन पालन तन मलिन, करत, विसर जिनराय ॥ २ ॥
नमूं नमूं भगवन्त को, गणपति को शिरनाय।
नमूं सरस्वती शारदा, ऋद्धि सिद्धि वरदाय ॥ ३ ॥
वाहवा! कैसी उत्तम सभा जुड़ी है !!

अहोभाग्य है आज हमारा ।
उठत उमंग तरंग अपारा ॥
देख देख मन हर्षित होई ।
ज्ञानी गुणि सज्जन अवलोई ॥

अहाहा ! आज इस मंडप में कैसी शोभा छा रही है। वाह-वा ! कैसी बहार आरही है। यहाँ आज कैसे कैसे विद्वान, ज्ञानी और महान् पुरुषों का समूह सुशोभित है. जिनका अपने २ स्थान पर सुयोग्य रीति से आसन जमाये बैठना भी, अहा ! कैसा यथोचित है।

(उपस्थित मंडली से)—महाशयगण ! आप जानते हैं यह संसार असार है। इसका वार है न पार है। यहाँ सदा

मौत का गर्म बाज़ार है। फिर इस में अधिक जी उलझाना निपट बेकार बल्कि जान का आज़ार है।—जो इसमें जी उलझाते हैं, मनुष्य आयु को बेकार गँवाते हैं। पीछे पछताते और अन्त समय इस दुनिया से यूंही हाथ पसारे चले जाते हैं।—सभ्य गण! लक्ष्मी स्वभाव ही से चञ्चल है। इसके स्थिर रहने का भरोसा घड़ी है न एक पल है। संसार में भला कौन साहस के साथ कह सकता है कि यह अटल है।—यह इन्द्रियों के विषय भोग भोगते समय तो कहने मात्र रसीले हैं। पर निश्चय जानिये अपनी तासीर दिखाने में काले नाग से भी कहीं अधिक विषीले हैं।—जीतव्य पानी के बुलबुले के समान है। जिसको इस रहस्य का यथार्थ ज्ञान है उसी का निरन्तर परमात्मा से ध्यान है। वास्तव में ऐसे ही महान् पुरुषों का फिर सदा के लिये कल्याण है।

मान्यवर महाशयो! आपने नाटक तो बहुत से देखे होंगे पर पाप मोल लेकर दाम व्यर्थ ही फेंके होंगे। किंतु इस समय जो नाटक आप को दिखाया जायगा, आशा है कि आप में से हर व्यक्ति उससे परम आनन्द उठायगा। संसार की असारता और लक्ष्मी आदि की क्षणकता जो इस समय थोड़े से शब्दों में आपको दर्शायी है, उसी की हू बहू तस्वीर खींच कर इस अमूल्य नाटक में दिखाई है। जिसमें आपका

खर्च एक पैसा है न पाई है। कहिये महाशयगण! कैसी उपयोगी बात आपको सुनाई है।

(नेपथ्य की ओर को ऊँचे स्वर से) प्रिये! आओ, आओ! यहाँ पधारो। देखो, आज यह कैसा सुन्दर समूह सुशोभित है और कैसे कैसे विद्वान महाशय विराजे हैं।

नटी (नेपथ्य में—बहुत अच्छा प्राणनाथ, आती हूं।

नटी का प्रवेश

[इधर उधर को अवलोकन करती हुई आती है]

(स्त्रियों की ओर दृष्टि डालकर)—अहाहा! यहाँ तो स्त्रीगण भी विराजमान हैं।

सूत्रधार—ऐसी उत्तम सभा को देख कर मेरा जी चाहता है कि इस समय कोई ऐसा नाटक दिखाया जावे जिस से कोई आत्महितकारी उपदेश मिले।

नटी—हाँ प्राणनाथ! ऐसा ही होना चाहिये। मेरी भी यही इच्छा है।

[विदूषक मुस्कराता हुआ आता है]

विदूषक—(सूत्रधार से)—महाशय जी! आज्ञा हो तो मैं कोई नाटक खेलूं?

सूत्रधार—हां, क्या हरज है। आप ही आरंभ कीजिये। पर इतना ध्यान रहे कि उस से कोई आत्म हितकारी उपदेश दीजिये।

विदूषक—अच्छा महाशय जी, ऐसा ही लीजये।

विदूषक तीन बार ताली बजाता है। तीसरी ताली पर उछलते कूदते कई एक चेले चोटि तिलक छापे आदि लगाये आते हैं विदूषक को प्रणाम दंडवत करके उसके पासचारों ओर बैठ जाते हैं विदूषक कूंडी सोटा सम्हाल, थैली से भंग आदि सामग्री निकाल, घोटना आरम्भ करता है। चेलों में से कोई पंखा झलता, कोई गुरु जी के हाथों से विनय पूर्वक कूँडी सोटा लेकर स्वयं भांग घोटता और कोई गुरु जी के चरण दबाता है

विदूषक (गाता है और सर्व चेले दुहराते हैं)—

हां भंग की तरंग में उमंग है भरी।
अब घोट छान पी जपैं शिव शिव हरी हरी॥

नटी—हे सज्जन! तुम यह कर क्या रहे हो? यह कौन से शास्त्र का उपदेश है? यह कौन सी आत्म हितकारी क्रिया है?

विदूषक—(खड़ा होकर मुस्कराता हुआ)–वाह जी, आत्म हितकारी नहीं तो क्या यह कोई हत्यारी क्रिया है ?

सूत्रधार—जी हां, यह मनुष्य जीवन के असली उद्देश्य को निष्फल करनहारी क्रिया है। उच्च श्रेणी की विद्या प्राप्त करने में रोड़ा अटकाने वाली क्रिया है। और परलोक सुधार में भी वाधा डालने वाली क्रिया है।

विदूषक–प्रियवर महाशय जी ! सर्व चिन्ता निवारक, अनेक दुःख-विदारक, और शरीर पुष्टिकारक, इससे वढ़ कर भला और कौन सी क्रिया होसकती है ? मान्यवर महाशय जी ! मन-प्रसन्न कारक शास्त्र का तो यही विषय है। आत्मा का हित सर्वथा इसी में है। आप जानते हैं कि भंग की अनोखी तरंग का डोरा जब आंखों में आता है तो चित्त आनन्द सागर में कैसा मग्न होजाता है। क्यों ठीक है ना ? अहा ! उस समय मिष्ट और स्वादिष्ट भोजन के लिये चित्त कैसी कैसी उमंगे भरता है ! अहा हा !! भंग जैसा आनन्द दायक अमूल्य पदार्थ भाग्यहीनों को भला कब नसीव होता है। आपका जी चाहता हो तो लीजिये आप भी दो चार घूंट पीलीजिये। (हाथ वढ़ाकर) लीजिये, लीजिये, पीजिये महाशय जी।

सूत्रधार–प्रियवर ! यह सभा (हाथ का इशारा सभा

की ओर करके) ऐसे विषय पोषक और कामोद्दीपक पदार्थों की अनावश्यक रुचि उत्पन्न कराने वाले नाटक दिखाने योग्य नहीं है। क्या आप नहीं जानते कि यह आत्मबल को हानि पहुंचाती, कामदेव को उत्तेजित करती, चटोरपन सिखाती और कुविषय वासनाओं को बढ़ाती है।

विदूषक-अजी यूं क्यों नहीं कहते कि शरीर को पनपाती और खूब हृष्ट पुष्ट बनाती है॥

नटी-जी नहीं! तुम जैसे अनसमझों को भ्रमाती है। बदहवासी लाती है। और बादी से शरीर को फुलाती है।

विदूषक-अजी तनिक पीकर और इस सभा को पिला कर तो देखिये, सर्व को कैसा मस्त बनाती है। और सुनिये, देखिये शिव जी महाराज इसके विषय में क्या कहते हैं-वे कहते हैं।

जो तू चाहे मुक्ति को, सुन कलियुग के जीव।
गङ्गोदक में छानकर, भङ्गोदक को पीव॥

सूत्रधार-प्रियवर क्या तुमने श्री विष्णु भगवान का वचन नहीं सुना—उनका वचन है--

भंग ज्ञान को भंग कर उद्यम हीन बनाय।
करे प्रमादी पुरुष को अन्त कुगत ले जाय॥

महाशय जी! टुक दृष्टि डालकर देखियेना, यह विद्वानों

और ज्ञानी पुरुषों की सभा है। इन महानुभावों में कोई भी स्त्री पुरुष ऐसे अनसमझ नहीं हैं जो यह न जानते हों कि सर्व ही नशीले पदार्थ बुद्धि को हानिकारक, ज्ञान शक्ति के नाशक, स्मर्ण शक्ति के घातक और कुवासनाओं के उत्तेजक हैं। जो इनका सेवन करते हैं उन्हें यह अपने वशीभूत कर और प्रमादी बना धर्म कर्मसे भी विमुख कर देते हैं। सुनो-

वस्तु नशीली हैं जिती, सब ही हैं दुख मूल।
"चेतन" इनको त्यागकर, सबपर डालो धूल॥

किसी उर्दू कवि का भी वचन है—

जितने नशे हैं मीर क़यामत के जाल हैं।
जो इनको मुँह लगाते हैं आशुफ़्ता हाल हैं॥

क्यों समझ गये ना!

विदूषक-अच्छा तो फिर आपही कोई नाटक दिखाइये।

सूत्रधार-हाँ तो बस आप सिधार जाइये।

विदूषक-बहुत अच्छा। (चेलों सहित जाता है)

नटी-हां तो प्राणनाथ! यह बताइये कि आज आप कौनसा नाटक खेलना चाहते हैं।

सूत्रधार-मेरी समझ में इस विद्वान मंडली को प्रसन्न करने के लिये "जंबूकुमार नाटक" बड़ा सुयोग्य नाटक है। इस समय यही खेलना अच्छा होगा।

नटी-वाहवा, आर्यपुत्र ! आपने बहुत अच्छा विचार किया। यह नाटक इस सभा के लिये बहुत ही उपयोगी होगा। बस देव गुरु वन्दना करके प्रारम्भ कर दीजिये।

(सूत्रधार और नटी दोनों देवशास्त्र गुरु वन्दना करते हैं)

नमामि नाभि-नन्दनम्, भवाधि व्याधि कंदनम्।
समाधि साध चंदनम्, शर्तींद्र वृन्द वन्दितम्॥
अशेष क्लेश भंजनम्, मदादि दोष गंजनम्।
मुनिन्द्र कंज रंजनम्, दिनम् जिनं अमन्दितम्॥
अनन्त कर्म घातिकम्, प्रशस्त कर्म दायकम्।
नमामि सर्व लायकम्, विनायकम् सुछन्दितम्॥
समस्त विघ्न नाशिये, प्रमोद को प्रकाशिये।
निहार हमहिं दासये, प्रभू करो अफन्दितम्॥
जय जिनेश ज्ञान भान, भव्य कोक शोक हान।
लोक लोक लोकवान, लोकनाथ तारकम्॥
ज्ञान सिन्धु दीनबन्धु, पाहि पहि पाहि देव।
रक्ष रक्ष रक्ष मोक्षपाल शील धारकम्॥

हम गुरु चरण कमल सिरनाथ। मन वच तन थुत बहु हर्षाय॥
अन्तिम केवलि जम्बु कुमार। तिनके चरण नमें चित धार॥

[विदूषक का प्रवेश]

विदूषक—अहाहा ! वाह महाशय जी, आप तो बूढ़े से

बालक ही बन गए। क्या "जम्बुक-मार" अर्थात् 'गीदड़ मार शिकारी' का चरित आप इस विद्वन् मंडली को दिखायँगे ?

सूत्रधार—नहीं नहीं महाशय जी ! क्षमा कीजिये आप समझे नहीं। "जम्बुक-मार" का चरित्र नहीं, "जम्बु-कुमार" का चरित्र। अब समझे !

विदूषक—जी हां खूब समझा, अब मैं समझ गया, 'जम्बु-कुम्हार' का चरित्र। क्या जम्बु-कुम्हार अर्थात् जामुन खाने वाले कुम्हार का चरित्र दिखा कर आज आप सभा को रिझायँगे ?

सूत्रधार—नहीं प्रियवर ! जम्बुकुँवर एक महा धनाढय सेठ के बड़े ज्ञानी पुत्र थे। इनका संक्षिप्त इतिहास सुनिये:—

राजग्रहि नगरी बसे, उत्तम देश बिहार।
अर्हद्दत्त इक सेठ तहँ, जिनमति जिनकी नार॥
धन्य अर्हद्दत सेठ पितु, धन्य जिनमती मात।
कुलदीपक जिन सुत भया, जम्बु कुँवर विख्यात॥
चौबिस वर्ष कुमार वय, सर्व विभव को त्याग।
तप संयम अनुरक्त हो, चित धर दृढ़ वैराग॥
जेष्ठ शुक्ल तिथि सप्तमी, पूर्ण ज्ञान-पद पाय।
लगभग चालिस वर्ष लौं, मोक्ष मार्ग दर्शाय॥
महावीर निर्वाण सों, बासठ वर्ष पिछार।
मथुरापुरी उद्यान सों, हो गये भवदध पार॥

(नटी से) आओ प्रिये ! चलो सजित हो आवें ।

(विदूषक सूत्रधार और नटी सब जाते हैं)

(पटाक्षेप)
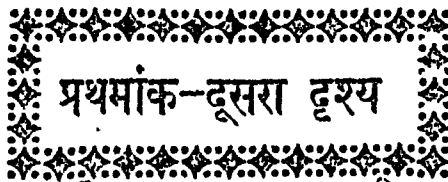
प्रथमांक-दूसरा दृश्य

नाटकपात्रों का मिलकर
जय जिनेन्द्र गान

(पर्दे का उठना और सब का मिलकर हाथ जोड़े
जय जिनेन्द्र गाना)

सारी सभा को जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र हो ।
तिहुं लोक तिहूं काल में हां जय जिनेन्द्र हो ॥ टेक ॥
जम्बूकुमार सेठ का नाटक करेंगे हम ।
बोलो पुकार बार बार जय जिनेन्द्र हो ॥ सारी० ॥
जिस तौर जम्बुकुंवर ने तोड़ा है मोह फन्द ।
बतलायेंगे महाशयो हां जय जिनेन्द्र हो ॥ सारी० ॥
चारों त्रिया और मात से स्नेह को तजा ।

दिखलायेंगे यह सब तुम्हें अब जय जिनेन्द्र हो ॥ सारी० ॥
जिन भक्ति उर में हो तो कहो जय जिनेन्द्र हो ।
हाँ जय जिनेंद्र जय जिनेंद्र जय जिनेन्द्र हो ॥ सारी० ॥
"चेतन" श्री जिनेंद्र चरण चित लगाइये ।
मंगल हों विघ्न नाश हों अब जय जिनेन्द्र हो ॥ सारी ०॥

(पर्दा गिरता है)

द्वितीयाङ्क—पहिला दृश्य

जम्बूकुमार के विवाह
की चर्चा

[एक वृद्ध फक्कड़ कुछ अलापता हुआ आता है]

न्हाकर धोकर खाकर पीकर आओ चलें बज़ार ।
बनकर सुन्दर बरतर खुश्तर देखें ख़ूब बहार ॥
न्हाकर धोकर खाकर पीकर आये बीच बज़ार ॥
बनकर सुन्दर बरतर खुश्तर देखी ख़ूब बहार ॥

एक सिपाही (सामने से आकर)—हट जा यार

फक्कड़—चल बे गंवार

सिपाही—होश सम्हार

फक्कड़—क्या तकरार

सिपाही–खायगा मार

फक्कड़–बड़ा लबार

सिपाही–ख़बरदार

फक्कड़–बदकिरदार.

सिपाही–हो होशियार.

फक्कड़–(.खम ठोक कर) दूं पछार लगाऊं मार

सिपाही–(म्यान से तलवार निकाल कर) देख कटार, यह तलवार

फक्कड़–(डरकर) हां सरदार, तावेदार, मतकर वार

सिपाही–(तलवार म्यान में रख कर) उधर सिधार

फक्कड़–(हटकर) लो सरकार

{ वृद्ध फक्कड़ अपना राग अलापता हुआ एक ओर को हटता है और सेठ साहूकारों की सवारी बड़ी भीड़ भाड़ और जुलूस के साथ निकलती है }

फक्कड़–न्हाकर धोकर खाकर पीकर आये हैं बाज़ार।
बनकर सुन्दर, बरतर खुशतर, देखी .खूब बहार॥

एक मनुष्य—(सामने से आकर) गुरू जी ! आज आप यह क्या अलाप रहे हैं।

फक्कड़–अहहहहह ! यही कि-

न्हाकर धोकर, खाकरपीकर, आये हैं बाज़ार ।
बनकर सुन्दर, बरतर खुशतर, देखी ख़ूब बहार ॥

मनुष्य—अजी आपने कुछ सुना भी ?

फक्कड़—अबे सुना ही नहीं देखा भी !

मनुष्य—क्या देखा गुरू जी ?

फक्कड़—क्या तू अन्ध है, आंखों की जोत कुछ मंद है ? (हाथों का इशारा करके) वह देख कैसी भीड़ है, अहा, क्या बहार है पर यह नहीं जानते कि आज लोगों की इतनी क्यों भरमार है ।

मनुष्य—अजी यही बताने को तो सेवक भी तैयार है ।

फक्कड़—अहहहहह ! अरे भाई तब जल्दी सुनाओ क्या समाचार है ।

मनुष्य—आप जानते हैं, यहां एक अर्हद्दत्त सेठ सब सेठों का सरदार है ।

फक्कड़—हां, हां, वह सेठ तो बड़ा मालदार है ।

मनुष्य—बस उसी का एक इकलौता बेटा जम्बुकुमार है ।

फक्कड़—उस पर तो यहां के महाराजा अजातशत्रु का भी बड़ा लाड़ है, अपने पुत्र से भी अधिक प्यार है ।

मनुष्य—जी हाँ, जीहां ! बस आज उसी कुमार का तो विवाह संस्कार है, उसी का यह सब मङ्गलाचार है ।

फक्कड़—अच्छा तो अब हम समझे, आज यह सब उसी की वहार है। अहहहहह !

अस्तर वस्तर ख़ूब पहन कर सज कर जावें यार।
बनकर सुन्दर बरतर ख़ुशतर लावें बहु दीनार॥
मौज उड़ावें यार। अहहहहह !!

मनुष्य—अजी सुनिये तो, सुनिये तो, यह क्या विचार है? क्या जम्बुकुमार आपका यार है, या कोई रिश्तेदार है?

फक्कड़—अरे भाई यार नहीं तो उसका बाप तो बड़ा भारी साहूकार है, मालदार है, उसके घर में लाखों करोड़ों दीनार है, धन बेशुमार है। अहहहहह !

मनुष्य—फिर आपको उसकी मालदारी से क्या सरोकार है!

फक्कड़—अरे बेटा वह बड़ा उदार है, सहस्रों का दान करना तो उसका नित्यप्रति का व्यवहार है। फिर आज तो उसके इकलौते प्रिय पुत्र का विवाह संस्कार है। तब तो भला हम जैसों का क्यों नहीं उद्धार है।

दूसरा मनुष्य(पीछे से आकर)—पर यह भी जानते हो कि ज्ञानी कुमार की दृष्टि में संसार का सारा विभव असार है। भोग विलासों से उसका जी बेज़ार है। उसके हृदय में यथार्थ ज्ञान का चमत्कार है।

फक्कड़—तब तो मेरी समझ में वह पक्का गंवार है।

आगन्तुक—जी नहीं ज्ञान का भण्डार है, बड़ा समझदार है

फक्कड़–नहीं, तुम्हारा यह झूठा विचार है, सर्वथा असार है, बिल्कुल नापायदार है।

अगर ऐसे बड़े सेठ का पुत्र होकर भी उसने विवाह न किया तो वह अवश्य बदकार है, उसके मन में व्यभिचार है, किसी कुलटा या वेश्या का यार है, जिसका दुष्फल दुर्निवार है। कुछ ही दिन पीछे देखना कि यह दुराचार ही उसे उसके जीवन का भार है। तब चारों ओर से पड़ेगी फटकार है।

पहला मनुष्य–गुरु जी, घबराइये नहीं, विवाह कर लेने का तो उसका इक़रार है।

दूसरा मनुष्य–परन्तु विवाह करके अगले ही दिन सब आडम्बर छोड़ छाड़ मुनि हो जाने का उसका दृढ़ विचार है।

फक्कड़–अच्छा तो फिर यूं क्यों नहीं कहते कि दोनों ही घर अन्धकार है। बेचारी अबला स्त्री का तो सारा जीवन ही उजाड़ है। (मन में) अरे भाग्य! तू बड़ा दुर्निवार है! (कुछ सोच कर) अच्छा बेटा, यह तो बताओ कि वह अभागिन किस की राजदुलार है?

दूसरा मनुष्य–अजी जिन अबलाओं के साथ उसका विवाह होगा उनकी संख्या एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं, चार है।

पहला मनुष्य–जी हां, और इसी नगर में आज ही सायंकाल एक ही मंडप में एक दम चारों का पाणिग्रहण किये जाने का समाचार है।

दूसरा मनुष्य—इसी लिये तो वह देखिये ना कैसी सज धज के साथ विवाह मंडप की ओर को जाता दीख रहा नगर का हर सेठ साहूकार है। कोई घुड़सवार है, कोई झन्डी बरदार है। और कहीं सिपाहियों की लंगार है।

पहिला मनुष्य—और वह देखिये, हर एक के साथ दो दो एक एक खिदमतगार है, कोई भालाबरदार है, किसी के हाथ में बल्लम या कटार है, किसी के पास तलवार है, कहीं तमाशाइयों की भीड़ भाड़ है, कहीं सिपाहियों और पहरेदारों की क़तार है, और कहीं तरह तरह के बाजों की झनकार है।

दूसरा मनुष्य—अहा! स्थान स्थान पर आज कैसी बहार है। जिधर नज़र उठाकर देखिये, बस गुलज़ार ही गुलज़ार है। रौनक़ बेशुमार है।

फक्कड़—अच्छा, आओ हम भी ज़रा चल कर देखें, क्या होनहार है।

सब जाते हैं।

(पटाक्षेप)
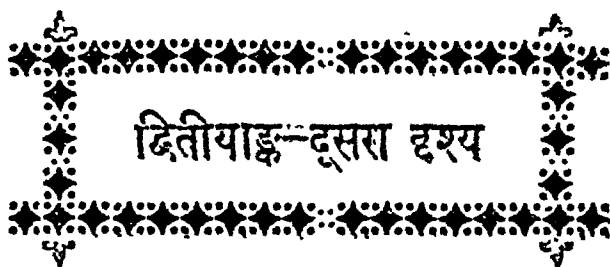
जम्बुकुमार के विवाह में आनन्द गान।

{ परदा उठता है और उभय पक्ष के महलों में तथा उनके मित्रादि के घरों में विवाह के हर्ष में आनन्द-राग गाये जा रहे हैं। }

गान (१)

गुलशन में आई बहार बहार,
बहार मेरी बहना, नगरी में छाई बहार ॥ टेक ॥
ब्याह रचन की यह शुभ घड़ी है, क्यों ना हो आनन्दकार,
जपो भगवत बारम्बार
उसकी भक्ती हो अपार,
अपार, अपार मेरे जियरा, नगरी में छाई बहार, देखो
छाई बहार, बहार मेरी सजनी, गुलशन में आई बहार।
सेठ दुलरियाँ, ज्ञान पिटरियाँ, विद्या में अगम अपार,
तिष्ठें मंडप में चार,

करके सोलह शृङ्गार,

मनमें भगवत को धार,

उसकी भक्ती अपार,

अपार, अपार मेरी प्यारी, नगरी में छाई बहार,

बहार मेरी सजनी गुलशन में आई बहार।

धर्म करम में कैसे निपुण हैं, देखो यह जम्बू कुमार,

अहा, शील के सिंगार,

हां, हमारे सरदार,

ये वरेंगे चारों नार,

करेंगे नित प्यार,

होवेंगे आनँदकार,

श्री जिन को चित धार,

उनकी भक्ती हो अपार,

अपार, अपार प्यारे "चेतन" नगरी में छाई बहार,

बहार मेरी बहना गुलशन में आई बहार॥

द्वितीय गायन

अरी परी सखी मेरी प्यारी,

देखो कैसी खिली फुलवारी।

गुलकारी, दिलदारी, बहनारी, मैं वारी,

अरी एरी सखी मेरी प्यारी
देखो कैसी खिली फुलवारी ॥
धन्यभाग शुभ अवसर पायो, घड़ी आई है आनँदकारी,
मनप्यारी, सुखकारी, बहनारी, मैं वारी,
अरी एरी सखी मेरी प्यारी,
देखो कैसी खिली फुलवारी ॥
"चेतन"नगरियामें आनन्द छायो,गाओ भगवतके गुण चितलारी,
गुण गारी, हरपारी, उसकारी, बहनारी,
अरी एरी सखी मेरी प्यारी,
देखो कैसी खिली फुलवारी ॥

द्वितीयाङ्क-तीसरा दृश्य

—०—

चार सेठ पुत्रियों का जंबुकुमार के साथ विवाह

एक महल के सामने विवाहमण्डप में वर, ४ कन्याएं, गृहस्थाचार्य, कुलपुरोहित, पांचों सेठ और कुछ अन्य सेठ साहूकारों का द्वार पर पड़े हुए चिक-नुमा परदे के अन्दर बैठे नज़र आना और वेदी के सामने विवाह संबंधी पूजन हवन आदि क्रियाओं का होना। मण्डप के दरवाजे के आगे दो दर्बानों का पहरा देना।

(गृहस्थाचार्य हवन कराता है)

श्रीतीर्थनाथपरिनिर्वृत्तिपूज्यकाले ।
आगत्य वह्निसुरपा मुकुटोल्लसद्भिः ॥
वह्निव्रजैर्जिनपदेहमुदारभक्त्या ।
देहुस्तदग्निमहमर्चयितुं दधामि ॥

ॐ ह्रीं प्रणीताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(ऐसा बोलकर वर वधू अर्घ चढ़ाते हैं। फिर होम की सामग्री ले कर नीचे लिखे हर मन्त्र पर स्वाहा के उच्चारण के साथ घृतादि सुगन्धित पदार्थों की आहुति देते जाते हैं)

नोट—निम्नलिखित हवन मन्त्रों में से यथा आवश्यक थोड़े, से मन्त्र बोलने के पश्चात् धीरे २ पटाक्षेप किया जाय।

(१) पीठिका के मंत्र

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा ॥ १ ॥ ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ॥ २ ॥ ओं परमजाताय नमः स्वाहा ॥ ३ ॥ ओं अनुपमजाताय नमः स्वाहा ॥ ४ ॥ ओं स्वप्रधानाय नमः स्वाहा ॥५॥ ओं अचलाय नमः स्वाहा ॥ ६ ॥ ओं अक्षताय नमः स्वाहा ॥७॥ ओं अव्याबाधाय नमः स्वाहा ॥ ८ ॥ ओं अनन्तज्ञानाय नमः स्वाहा ॥ ९ ॥ ओं अनन्तदर्शनाय नमः स्वाहा ॥ १० ॥ ओं अनन्तवीर्याय नमः स्वाहा ॥११ ॥ ओं अनन्त-सुखाय नमः स्वाहा ॥ १२ ॥ ओं नीरजसे नमः स्वाहा ॥ १३ ॥ ओं निर्मलाय नमः स्वाहा ॥१४॥

ओं अच्छेद्याय नमः स्वाहा ॥ १५ ॥ ओं अभेद्याय नमः स्वाहा ॥ १६ ॥ ओं अजराय नमः स्वाहा ॥ १७ ॥ ओं अमराय नमः स्वाहा ॥१८॥ ओं अप्रमेयाय नमः स्वाहा ॥ १९ ॥ ओं अगर्भवासाय नमः स्वाहा ॥ २० ॥ ओं अक्षोभाय नमः स्वाहा ॥२१॥ ओं अविलीनाय नमः स्वाहा ॥ २२ ॥ ओं परमधनाय नमः स्वाहा ॥ २३ ॥ ओं परमकाष्ठायोगरूपाय नमः स्वाहा ॥ २४ ॥ ओं लोकाग्रवासिने नमो नमः स्वाहा ॥ २५ ॥ ओं परम सिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥ २६ ॥ ओं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥ २७ ॥ ओं केवलिसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥ २८ ॥ ओं अन्तःकृतासिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥ २९ ॥ ओं परम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥ ३० ॥ ओं अनादि परम्परा सिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥ ३१ ॥ ओं अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो नमः

स्वाहा ॥३२॥ ओं सम्यग्दृष्ट्यासन्नभव्यानिर्वाण-पूजार्हाग्नीन्द्राय स्वाहा ॥ ३३ ॥

आशीर्वाद

सेवाफलं षट् परम स्थानं भवतु। अपमृत्यु विनाशनं भवतु। समाधिमरणं भवतु ॥

आहुति देकर गृहस्थाचार्य वर वधू के शिर पर पुष्प क्षेपण करता है।

(२) अथ जाति मंत्र

ॐ सत्य जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥३॥ ॐ अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ अनुपम जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा ॥ ७ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते सरस्वती सरस्वती स्वाहा ॥ ८ ॥

आशीर्वाद

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु। अपमृत्यु विनाशनं भवतु। समाधि मरणं भवतु ॥

(आहुति देकर गृहस्थाचार्य पुष्प क्षेपण करता है)

(३) अथ निस्तारक मंत्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ षट्कर्मणे स्वाहा ॥३॥ ॐ ग्रामपतये स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ अनादि श्रोत्रियाय स्वाहा ॥५॥ ॐ स्नातकाय स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥ ७ ॥ ॐ देव ब्राह्मणाय स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥९॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥१०॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा ॥ ११ ॥

आशीर्वाद

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्यु विनाशनं भवतु ।
समाधि मरणं भवतु ॥

(आहुति दे कर पुष्प क्षेपे)

(४) अथ ऋषि मंत्र

ॐ सत्य जाताय नमः स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ निर्ग्रन्थाय नमः स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ वीतरागाय नमः स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ महाव्रताय नमः स्वाहा ॥५॥ ॐ त्रिगुप्ताय नमः स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ महा योगाय नमः स्वाहा ॥७॥ ॐ विविध योगाय नमः स्वाहा ॥८॥ ॐ विवधर्द्धये नमः स्वाहा ॥९॥ ॐ अङ्ग-धराय नमः स्वाहा ॥१०॥ ॐ पूर्वधराय नमः स्वाहा ॥११॥ ॐ गण-धराय नमः स्वाहा ॥१२॥ ॐ परमर्षिभ्यो नमो नमः स्वाहा ॥१३॥

ॐ अनुपमजाताय नमो नमः स्वाहा ॥१४॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग् दृष्टे भूपते भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ॥१५॥

आशीर्वाद

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्यु विनाशनं भवतु ।
समाधि मरणं भवतु ॥

(आहुति देकर पुष्प क्षेपे)

(५) अथ सुरेन्द्र मंत्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ दिव्य जाताय स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ दिव्यार्चिर्जाताय स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ सौधर्माय स्वाहा ॥ ६ ॥ ओं कल्पाधिपतये नमः स्वाहा ॥ ७ ॥ ओं अनुचराय स्वाहा ॥ ८ ॥ ओं परमपरेन्द्राय स्वाहा ॥९ ॥ ओं अहमिन्द्राय स्वाहा ॥ १० ॥ ओं परमार्हताय स्वाहा ॥ ११ ॥ ओं अनुपमाय स्वाहा ॥ १२ ॥ ओं सम्यग् दृष्टे सम्यग्दृष्टे कल्पपते कल्पपते दिव्यमूर्त्ते दिव्यमूर्त्ते वज्रनामन् वज्रनामन् स्वाहा ॥ १३ ॥

आशीर्वाद

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्यु विनाशनं भवतु ।
समाधि मरणं भवतु ॥

(आहुति दे कर पुष्प क्षेपे)

(६) अथ परमराज्यादि मन्त्र

ओं सत्यजाताय स्वाहा ॥ १ ॥ ओं अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥

ओं अनुपमेन्द्राय स्वाहा ॥३॥ ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा ॥ ४ ॥ ओं नेमिनाथाय स्वाहा ॥ ५ ॥ ओं परमजाताय स्वाहा ॥ ६ ॥ ओं परमार्हताय स्वाहा ॥ ७ ॥ ओं अनुपमाय स्वाहा ॥ ८॥ ओं सम्यग् दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेजः उग्रतेजः दिशांजन दिशांजन नेमि विजय नेमि विजय स्वाहा ॥ ९ ॥

आशीर्वाद

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्यु विनाशनं भवतु ॥
समाधिमरणं भवतु ॥
(आहुति दे पुष्प क्षेपे)

(७) अथ परमेष्ठी मन्त्र ।

ॐ सत्यजातायनमः स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ परमजाताय नमः स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ परमार्हताय नमः स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ परमरूपाय नमः स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ परमतेजसे नमः स्वाहा ॥६॥ ॐ परम गुणाय नमः स्वाहा ॥७॥ ॐ परम स्थानाय नमः स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ परम योगिने नमः स्वाहा ॥ ९ ॥ ॐ परम भाग्याय नमः स्वाहा ॥ १० ॥ ॐ परमर्द्धये नमः स्वाहा ॥ ११ ॥ ॐ परम प्रसादाय नमः स्वाहा ॥१२॥ ॐ परमकांक्षिताय नमः स्वाहा ॥ १३ ॥ ॐ परम विजयाय नमः स्वाहा ॥१४॥ ओं परम विज्ञानाय नमः स्वाहा ॥१५॥ ओं परमदर्शनाय नमः स्वाहा ॥१६॥ ओं परमवीर्याय नमः स्वाहा ॥१७॥

ओं परम सुखाय नमः स्वाहा ॥ १८ ॥ ओं परम सर्वज्ञाय नमः स्वाहा ॥ १६ ॥ ओं अर्हते नमः स्वाहा ॥ २० ॥ ओं परमेष्टिने नमः स्वाहा ॥ २१ ॥ ओं परम नेत्रे नमो नमः स्वाहा ॥ ॥ २२ ॥ ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्य विजय त्रैलोक्य विजय धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते धर्मनेमे धर्मनेमे स्वाहा ॥ २३ ॥

आशीर्वाद

सेवा फलं षट् परम स्थानं भवतु । अपमृत्यु विनाशनं भवतु । समाधि मरणं भवतु ॥

(आहुति दे पुष्प क्षेपे)

[इति हवनमंत्र समाप्तम्]

{ वृद्ध फक्कड़ कुछ गाता हुआ और खुश २ झूमता हुआ आता है }

फक्कड़ (मन में)—

अहा हा हा यह क्या कल कल है।

अहा हा हा यह क्या दंगल है, चलो देखें यह क्या मंगल है।

अहा हा हा·········॥

आओ देखें यह क्या हलचल है। चारों सेठों का खोई अकल है ॥

अहा हा हा·········॥

चलके भेद जतावें इनको। देंगे वेहद इनाम वह हमको ॥

अहा हा हा·········॥

(दरवान से)—क्यों जी आज यह कैसे मनोहर राग रंग और किस खुशी के सामान हैं?

दरबान—क्या आप को खबर नहीं! यह सब श्रीमान जम्बुकुमार के विवाह के विधान हैं।

फक्कड़—(मुस्कराकर)—अच्छा तो यूँ क्यों न कहो कि आज यह सब बड़े बड़े सेठों की तबाही और बरबादी के निशान हैं।

दरबान—देखो, खबरदार! चुप रहो, चुप रहो!! ऐसी शुभ घड़ी में कोई अशुभ शब्द मुँह से न निकालो।

फक्कड़—भला! शुभ घड़ी शुभ घड़ी का राग अलाप कर बस घड़ी दो घड़ी के लिये खूब रंग रलियाँ मनालो।

दरबान—देखो, ज़रा ज़बान को सम्हालो।

फक्कड़—मैं सच कहता हूं, इसे निश्चय जी में जमा लो, ज़रा भी झूठ हो तो मेरी जीभ कटा लो।

एक पहरेदार—(दरवाज़े के अन्दर से आकर)—अरे कौन है, क्या शोरोगुल है?

फक्कड़—अजी चारों सेठों को तो ज़रा बुलाइये, नहीं तो बस आज ही उनके घरों का चिराग़ गुल है!

पहरेदार—(बड़े अचम्भे में पड़कर घबड़ाहट से) अरे बाबा! तुमने यह क्या कहा!! मेरा जी तो बड़ा व्याकुल है!!! लो अभी बुला कर लाता हूँ।

{ चिक उठा कर अन्दर जाता है और चारों सेठों को साथ लाता है }

सेठ सागरदत्त–क्यों भाई क्या है?

फक्कड़–आपने यह ठाठ क्या रचा है?

क्या आपने यह नहीं सुना है कि कल परसों ही जम्बुकुमार ने श्री मुनि सुधर्माचार्य जी महाराज के मुखारविन्द से कुछ धर्म्मोपदेश सुन कर सांसारिक विषय भोगों से मुँह मोड़ लिया है। मुक्ति-रमणी से नाता जोड़ लिया है। इसके माता पिता ने इसे सब कुछ समझाया पर उस की समझ में एक न आया। अन्त को माता पिता के अटूट आग्रह से विवाह करना तो स्वीकृत कर लिया, पर आजकल ही में सब छोड़छाड़ जङ्गल को भाग जाने का विचार ठान लिया है। सेठ जी! अभी तो कुछ नहीं बिगड़ा। मन में भावे तो इस सर्व आडम्बर को अभी दूर करके किसी दूसरे वर की खोज कीजिये। नाहक़ इन बेचारी निरअपराध कन्याओं को जीवन भर के लिये विरहाग्नि में जलाने का पाप जान बूझ कर अब अपने शिर न लीजिये। (हँसता हुआ) कहिये, कैसे सुयोग्य अवसर पर बावन तोले पाव रत्ती बात सुनाई है। बताइये! यह बात कुछ मन भाई है, आप के चित्त में समाई है?

सेठ कुवेरदत्त—हाँ भाई, हमने यह बात पहिले ही सुन पाई है।

फक्कड़—तो फिर इन बेचारी अबला कन्याओं की गर्दन पर क्यों तलवार चलाई है। इन बालिकाओं को जन्म भर सताने की बात क्यों मन में समाई है?

सेठ वैश्रवणदत्त—अरे भाई, हमारी कुछ खता नहीं, हम ने तो यह सारी दास्तान पहिले ही इन्हें कह सुनाई है, तिस पर भी यह न माने तो हमारी क्या पार बसाई है।

सेठ श्रीदत्त—अजी यह चारों कहती हैं कि इन कुमार के सिवाय अन्य हरेक मनुष्य हमारा पिता, पुत्र या भाई है। अन्य किसी के साथ विवाह न करने की इन्होंने सौगन्द खाई है।

पहिला सेठ—बस यही बात इन्हें भाई है।

फक्कड़—अच्छा तो मालूम हुआ, इन बुद्धिहीन कन्याओं ही ने अपनी तक़दीर आज़माई है। और शायद इसीलिये इन चारों की विवाह वेदी यहाँ एक साथ एक ही जगह रचाई है। अरे! यह तो खूब चटपट अटसट गटपट की कार्रवाई है!! अच्छा तुम जानो तुम्हारा राम, हमें इससे क्या काम।

फक्कड़ इतना कह कर कुछ अलापता हुआ अपने
घर की राह लेता है और चारों सेठ मंडप में
को वापिस जाते हैं

[फक्कड़ की अलाप]

हाय हाय करम गति कैसी। इन कर्मों की ऐसी तैसी ॥

यह चारों सेठ कुमारी ।

विधना इन की मति मारी ॥

हाय हाय करम गति कैसी। इन कर्मों की ऐसी तैसी ॥

हम आये इनाम की आशा ।

पड़ा भाग्य का उलटा पांसा ॥

हाय हाय करम गति कैसी। इन कर्मों की ऐसी तैसी ॥

(पटाक्षेप)

[ड्रॉप सीन Drop Scene]

(सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार—

ज़माना रंग बदलता है ।

नित्य सुबह को दिन चढ़ता है, शाम को ढलता है ।

ज़माना रंग बदलता है ।

जिस घर प्रातःकाल युवतियां गा रहीं मंगलचार ।

सायंकाल उसी घर में बहती अँसुवन की धार ॥

कर्म की यही कुटिलता है, किसी का वश नहीं चलता है ।

ज़माना रंग बदलता है। नित्य० ॥ १ ॥

कल जिनको हम प्रेम दृष्टि से समझे थे सुखकार ।
आज उन्हीं से प्रेम तोड़ कर जान लिये दुख भार ॥
मन की कैसी चंचलता है । विचलता कभी सम्हलता है ।
ज़माना रंग बदलता है । नित्य० ॥ २ ॥
कभी काम के वश में फँस कर, तकें पराई नार ।
कभी प्रवल अरि कामदेव को जीत तजें निज दार ।
आज मन की दुर्बलता है । कल्ह चित की उज्जलता है ।
ज़माना रंग बदलता है । नित्य० ॥ ३ ॥
कोई पराये धन के लालच, मुसें पराया माल ।
कोई अपन धन दौलत को भी जानें जी जंजाल ॥
लोभ में चित्त फिसलता है । साथ कुछ भी नहीं चलता है ।
ज़माना रंग बदलता है । नित्य० ॥ ४ ॥
तन धन सब "चेतन" हैं चंचल एक अटल जिन नाम ।
कुछ दिन का जीवन जग में है, शीघ्र करो निज काम ॥
मनुष भव यही सफलता है ।
मौत का समय न टलता है ॥
ज़माना रंग बदलता है ।
नित्य सुबह को दिन चढ़ता है शाम को ढलता है ।
ज़माना रंग बदलता है ॥ ५ ॥

{ जम्बुकुमार का अपने शयनागार में रात्रि को नौ दश बजे के लगभग द्वादश वैराग्यभावनाओं का चिन्तवन करना और माता का आकर समझाना }

जम्बुकुमार (अकेले में अपने मन में)—हे आत्मन्!

सङ्गैः किं न विषाद्यते वपुरिदं किं छिद्यते नामयैः।
मृत्युः किं न विजृम्भते प्रतिदिनं द्रुह्यन्ति किं नापदः॥
श्वभ्राः किं न भयानकाः स्वपनवद्भोगा न किं वंचकाः।
येन स्वार्थमपास्य किन्नरपुर प्रख्ये भवे ते स्पृहा॥

हे आत्मन्! इस संसार में धनधान्य, स्त्री पुत्र और कुटुम्बादि का संग व मोह ममता क्या तुझे विषादरूप नहीं करते? यह शरीर क्या रोगों द्वारा पीड़ित नहीं किया जाता? मृत्यु क्या प्रतिदिन तुझे अपना ग्रास बनाने के लिये मुख नहीं फाड़ रही? आपदाएं क्या तुझसे द्रोह नहीं करतीं? क्या तुझे नरक के दुःख भयानक नहीं दीखते? और ये भोग जिनसे इस इन्द्रजाल रचित

किन्नरपुर के समान असार संसार में इतनी रुचि है क्या स्वप्न के समान तुझे धोखे में डालने वाले नहीं हैं ?

अरे मूढ़ प्राणी !

असद्विद्या विनोदेन मात्मानं मूढ़ वञ्चय ।
कुरु कृत्यं न किं वेत्सि विश्ववृत्तं विनश्वरम् ॥

अर्थात्—हे मूढ़ ! अनेक असत् कला चतुराई शृङ्गार शस्त्रादि असद्विद्याओं के विनोद से अपनी आत्मा को मत ठगा । तेरे योग्य जो हितकार्य हो उसे कर । क्या तू यह नहीं जानता कि जगत् के यह समस्त व्याल विनाशीक हैं ?

हे मन !

चिनुचित्तो भृशं भव्य, भावना भाव शुद्धये ।
याः सिद्धांत महातंत्रे, देवदेवैः प्रतिष्ठिताः ॥

अरे भव्य मन ! तू अपने भावों की शुद्धि के लिये बारह भावनाओं का चिन्तवन कर, जिन्हें श्री देवाधिदेव ने सिद्धान्त में प्रतिष्ठारूप कही हैं ।

अरे मूढ़ मन !

हृषीकार्थ समुत्पन्ने, प्रतिक्षण विनश्वरे ।
सुखे कृत्वा रतिंमूढ़, विनष्टं भुवनत्रयं ॥

अर्थात् हे मूढ़ क्षण २ में नाश होने वाले जो ये विषय भोग हैं, इनमें रति मानकर ये तीनों लोक के प्राणी नाश को प्राप्त हो रहे हैं, सो तू क्यों नहीं देखता ?

हे आत्मन !

वपुर्विद्धि रुजाक्रांतं जराक्रांतं च यौवनं

ऐश्वर्यं च विनाशान्तं मरणांतं च जीवितम् ॥

हे आत्मन् ! शरीर को रोगों से लदा हुआ, यौवन को बुढ़ापे से घिरा हुआ, ऐश्वर्य को विनाशीक और जीवन को मरणान्त जान।

अरे मन ! क्या तू नहीं जानता—

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सब को एक दिन अपनी अपनी वार॥

दल बल देई देवता, मात पिता परिवार।
मरते दम इस जीव को, कोइ न राखनहार॥

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहीं न सुख संसार में, सब जग देखा छान॥

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यूँ कबहूं इस जीव का, साथी सगा न कोय॥

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर सम्पति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय॥

दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह॥

मोह नींद के ज़ोर, जगवासी घूमें सदा।
कर्मचोर चहुँ ओर, सरवस लूटें सुध नहीं॥

सतगुरु देयँ जगाय, मोह नींद जब उपशमै।
तब कुछ बने उपाय, कर्मचोर आवत रुकैं॥

ज्ञानदीप तप तेल भर, घर शोधे भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसें नहीं, पैठे पूरब चोर॥

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच निर्द्धार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार॥

चौदह राजु उतङ्ग नभ, लोक पुरुष संस्थान।
तामें जीव अनादि से, भ्रमण करै बिन ज्ञान॥

याचै सुरतरु देय सुख, चिन्तै चिन्तारैन।
बिन याचै बिन चिंतये, धर्म सकल सुख दैन॥

धनकन कंचन राजसुख, सबै सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में एक सुबोधक ज्ञान॥

अरे मन! इस असार संसार में कौन सदा अमर है!! षट्खण्डाधिपति भरत आदि चक्रवर्ती, हुङ्कारमात्र से पृथ्वीतल को कम्पायमान करने वाले रावण आदि महा मानी, बड़े बड़े मानियों का मान भङ्ग करने वाले रामलक्ष्मण, कृष्ण बलदेव आदि बलधारी और वैभवशाली महान् पुरुष आज इस दुनियां में कहाँ हैं!!!

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरतखण्ड सारा।
कहाँ गये वह रामरु लक्ष्मण जिन रावण मारा॥

कहां कृष्ण रुक्मणि सतभामा, अरु संपति सगरी।
कहां गये वह रङ्गमहल, अरु सुवरण की नगरी॥

नहीं रहे वह लोभी कौरव, जूझ मरे रण में।
गये राज तज पांडव वन को, अग्नि लगी तन में॥

मोह नींद से उठ रे "चेतन", तुझे जगावन को।
हो दयालु उपदेश किया गुरु, दुःख निवारण को॥
जग से तारन को॥

हे मन! तू आँखें खोल कर देखता क्यों नहीं कि इस संसारचक्र में कौन वस्तु सदा स्थिर है?

सूरज चांद छिपैं निकलै ऋतु फिर २ कर आवे।
प्यारी आयू ऐसी बीते पता नहीं पावे॥

ओस बूँद ज्यों गलै धूप में वा अंजुलि पानी।
क्षण क्षण यौवन क्षीण होत है क्या समझे प्रानी॥

इन्द्रजाल आकाश नगर सम जग संपति सारी।
अथिररूप संसार रे चेतन है यह दुखकारी॥

जन्मै मरै अकेला चेतन सुख दुख का भोगी।
और किसी का क्या इकदिन यह देह जुदी होगी॥

कमलो चलै न पैंड जाय मरघट तक परिवारा।
अपने अपने सुख को रोवें पिता पुत्र दारा॥

{ जिनमती माता का प्रवेश
जम्बुकुमार का विनयपूर्वक हाथ जोड़कर प्रणाम करना }

माता—प्रिय पुत्र! यह समय इस प्रकार के विचारों में पड़ने

का नहीं है। देख, तेरे महान पुण्यकर्म के उदय से तुझे यहाँ सब प्रकार का आनन्द, सुख सम्पत्ति और वैभव प्राप्त है, जो हर किसी को स्वर्गों में भी मिलना कठिन और दुःसाध्य है। आनन्द के साथ इनका भोग कर। अन्य किसी प्रकार के चिन्ताजाल में फंस कर ऐसे अमूल्य समय को व्यर्थ न खो।

जम्बुकुमार (विरक्तभाव से नम्रतापूर्वक)—पूज्य माता जी! क्या तुम नहीं जानतीं कि—

रत्न जड़ित हू पींजरा सूआ जानत बन्ध।
जो संसारी विभव है, है जिय का इक फंद॥

माता—प्रियपुत्र! यह सब कुछ ठीक है। पर साथ ही इसके यह भी तो तुम भले प्रकार जानते हो कि—

दया धर्म का मूल है, त्यागे धर्म नशाय।
चारों का त्यागन किये, कैसे दया रहाय॥

जम्बुकुमार—माता जी!

यह चारों ही कामनी, अशुभ कर्म की खान।
इनके बन्धन में फँसे, मिले न मुक्ती थान॥

माता—प्रियपुत्र!

तू रक्षक इस वंश का, तू ही कुल की टेक।
तू ही दीपक महल का, कही मान मम एक॥
जो तू मन धारी यही, जो तुझ शुद्ध विचार।

पुत्र भये पीछे तनुज, लीजो संयम धार ॥

जम्बुकुमार—पूज्य माता जी ! आप की आज्ञा शिर आँखों पर, पर आप भले प्रकार जानती हैं कि—

कुलरक्षक इक धर्म है, गुरुभक्ती उजियार ।
वृथा काल खोऊँ नहीं, तिरहूँ भवदध पार ॥

पुष्प दिनन के फेर से, सूखत नीरस होय ।
पुत्र मोहवश दिन लगैं, निज गुण जैहैं खोय ॥

माता-प्रिय तनुज !

निज गुण तेरा है यही, सुख संपति परिवार ।
भोगो विलसो इन्हीं को, नरभव का यह सार ॥

जम्बुकुमार—माता जी !

निज गुण तुम जानो नहीं, निज गुण है इक ज्ञान ।
सब जानो पर मोहवश, हो रहीं तुम अनजान ॥
तन धन परिजन रूप कुल, तरुणी तनय तुरङ्ग ।
यह सब हैं पर ज्ञान बिन, निष्फल हैं सर्वङ्ग ॥
चेतन गुण है चेतना, फिर क्यों रहूँ अचेत ।
कर्म कींच के मैल को, धोऊँ होय सचेत ॥
धन सम्पति और कामनी, ये सुखदाता नाहिं ।
पंचेन्द्रिय के भोग सब, अन्तिम विष हो जाहिं ॥

माता—प्रियपुत्र !

वचन हमारे मान ले, मत ले संयम भार ।
इस तन कोमल के लिये, है खांडे की धार ॥

जम्बुकुमार—सुनिये

सेठ तनय "सुकुमाल" तन, अति कोमल सुकुमार ।
तन धन परिजन मोह तज, तप बल कर उद्धार ॥
संयम धर धर बहु युवक, तज कर भोग असार ।
तप बल से सर्वज्ञ हो, तिर गये भव दधि पार ॥

माता—प्रिय पुत्र !

जो तुम संयम लेओगे, मांगो घर घर भीख ।
उष्णोदक पीना पड़े, मानो मेरी सीख ॥

जम्बुकुमार—माता जी,

घर घर भित्ता मांगना, यह नहिं मुनि आचार ।
भक्ती श्रद्धावश कोई, दे तो लें आहार ॥
उष्णोदक के पियन से, रोग दोष मिट जाय ।
भोजन पर घर करन से, मान कषाय नशाय ॥

माता—

दया धर्म का मूल है, दया स्वपर उपकार ।
दया नष्ट होजायगी, तजो जो परणी नार ॥

जम्बुकुमार—

जीव दया उर में बसे, यासे त्यागूं नार ।

नारी वेड़ी विन फेरे, वने न कुछ उपकार ॥

माता—

विन नारी के जगत में, दया धर्म नहीं होय ।
नारी से सन्तान है, चले नाम भी सोय ॥

जम्बुकुमार—

काम क्रोध अरु लोभ मुद, यह शत्रू हैं चार ।
जो जन इन से दूर हैं, होवें भव दध पार ॥

माता—

विना काम सृष्टी नहीं, विना मोह उपकार ।
क्रोध विना नीती नहीं, लोभ विना पद्सार ॥

जम्बुकुमार—

यह उपदेशक वाक्य तुम, है भव वन्धन हेत ।
मुक्ति मार्ग कुछ और है,अविनाशी सुख देत ॥

माता—

चारों तेरी कामनी, ज्यों चन्दन तरु नाग ।
रहैं लिपटी दृढ़ मोहवश, जव तू ले वैराग ॥

जम्बुकुमार—

ज्ञान मोर की कूक से, मोह नाग के फन्द ।
सव ढीले पड़ जांयगे, क्षण में होऊं निवन्ध ॥

माता (आंखों में आँसू भरकर)—अरे प्रियपुत्र !

तू मुझ अन्ध की लाकड़ी, तू मुझ प्राणाधार।
तुझ बिन मम जीवन अरे, लागे भार अपार॥

जम्बुकुमार—(विनय से) पूज्य माता जी!

मेरा मेरा क्यों कहो, याँ न किसी का कोय।
चिदानन्द परिवार का, मेला है दिन दोय॥
जीव अनादी काल से, भ्रमण करत संसार।
कबहू तुम माता भई, कबहू भई भर्तार॥

माता—

चारों तेरी कामनी, हैं यह बाला नार।
परणी बाला को तजे, कैसे होगे पार॥

जम्बुकुमार—

उनके शुभ कर्मन उदय, मिलि हैं सत्गुरु आय।
तिन के सत उपदेश से, संयम लेंगी जाय॥

माता—

दान पुण्य पूजन भजन, धर्म ध्यान संयोग।
पति पत्नी मिल जो करें, कटैं न क्यों भव रोग॥

जम्बुकुमार—

दानादिक षट्कर्म ये, हैं सब ही शुभ कर्म।
सांसारिक सुख देत हैं, यह ही इनका धर्म॥
सुख सम्पति स्वर्गादि की, इक दिन सब का अन्त।

मोह जाल से छुटे बिन, मिले न विभव अनन्त ॥

(विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—(जम्बुकुमार से) प्रियवर ! आज तुमने यह क्या चरित रचा है ? पूज्य माता जी को क्यों दुःखकूप में धकेलते हो ? क्या तुम्हें ऋणहत्या का कुछ भी भय नहीं ?

जम्बुकुमार—महाशय जी ! मैं तो अपने घर का धनाढ्य हूं । मेरे ऊपर भला किसका ऋण ?

विदूषक—अजी, कोई छोटा मोटा ऋण नहीं, महान ऋण है जिस से उऋण होना सारे जीवन में भी केवल कठिन ही नहीं किन्तु असम्भव है ।

जम्बुकुमार—क्या मैं आपका ऋणी हूं ? अगर ऐसा है तो अभी इसी दम अपना सब ऋण चुका लीजिये । बस छुट्टी हुई ।

विदूषक—(हँसकर) बस छुट्टी हुई ! छुट्टी पाना आसान ही समझ लिया । प्रियवर ! सुनिये, आप किसी के पुत्र हैं, किसी के मित्र हैं । बाल्यावस्था में माता पिता ने आप की कैसी कैसी टहल, कैसी कैसी सेवा की थी ! मित्रों ने कैसे कैसे विचार सुझाकर आपको अनेक आपत्तियों से बचाया और दूरदर्शी दीर्घ विचारी बनाया !! विद्यागुरु ने विद्या पढ़ा कर और उत्तमोत्तम शिक्षाएँ देकर तुम्हें कैसा निपुण और कार्यकुशल

कर दिया !!! क्या यह सब बातें आपसे छिपी हैं ? क्या यह सब उनका भारी ऋण आप के शिर पर नहीं है ? क्या मूंड मुँडाकर आप उनका यह सब ऋण चुका सकेंगे ?

जम्बुकुमार—महाशय जी ! आपका वचन व्यवहारिक दृष्टि से तो सर्वथा सत्य है, किन्तु पारमार्थिक दृष्टी से नहीं । गृहफन्द में जिकड़े और ममताजाल में फँसे गृहस्थियों के लिये तो यही उचित है कि वे माता पिता आदि सर्व ही उपकारियों के उपकार का ऋण तन मन धन से पूर्णत: उनकी सेवा करके उतारने में सदैव दत्तचित्त रहें । किन्तु, विरक्त पुरुषों के लिये इसकी आवश्यकता नहीं ।

विदूषक—क्यों ?

जंबुकुमार—इसीलिए कि वे अपने विरक्त भावों द्वारा केवल अपने ही जन्म जन्मान्तरों के कर्मकलङ्क नहीं धो डालते किन्तु दूसरों के लिये आदर्श या पथप्रदर्शक बनकर और कल्याण का मार्ग दिखाकर ऋण चुकाना तो क्या, उलटा अपना ही ऋणी बना जाते हैं ।

विदूषक—हुँह ! यूं बातें बनाकर माता को भुलावे में डालते हो !! ऋण उतारने के सीधे मार्ग का व्यवहारिक बताकर यूं बातों ही बातों में टालते हो !!! अजी, यह झूठी बातें बनाना छोड़कर दुखिया माता के अमूल्य वचन क्यों नहीं पालते हो ?

जम्बुकुमार–मान्यवर ! तुम वृद्ध और अनुभवी होकर भी यथार्थ बात को झुटलाकर मुझे भ्रमाना चाहते हो ।

किस कारण तुम दे रहे, यह मिथ्या उपदेश ।
मोहबन्ध दृढ़ फन्द है, इसमें सार न लेश ॥

विदूषक (माता से)—

माता जी ये नहिं सुनें, तुम्हरी एकहु बात ।
चारों नारिन को अभी, जा भेजो हे मात ॥

सम्भव है कि उन अबलाओं की भोली भाली मनमोहनी सूरत, अति सोहनी मूरत, मीठी मीठी रसीली और मन लुभावनी बातें इनके चित्त पर अपना कुछ प्रभाव डाल सकें ।

(माता और विदूषक जाते हैं और पर्दा गिरता है)

तृतीयाङ्क—दूसरा दृश्य

जम्बूकुमार की चित्रसारी ।

जम्बू कुमार का अपनी चित्रसारी में अकेले टहलते और मन ही मन में स्त्री का स्वरूप चिन्तवन करते नज़र आना।

जम्बू कुमार (मन में)—अहा किसी महात्मा ने ठीक कहा है:—

दर्शनात् हरते चित्तं, स्पर्शनात् हरते बलम् ।
मैथुनात् हरते वीर्यं, दारा प्रत्यक्ष राक्षसी ॥

इसीलिये स्त्रियों की संगति तो क्या, इनकी तो हवा तक से ज्ञानियों को दूर ही रहना भला है।

(चारों स्त्रियों का प्रवेश)

पद्मश्री—प्राणनाथ ! यह क्या मन में विचारी है ?

जम्बुकुमार—कुछ नहीं, बस प्रातः काल ही मुनिव्रत धारण करने की तयारी है।

कनकश्री-प्राणनाथ ! भला पुण्यकर्म के उदय से मिले हुए भोग विलासों को लात मारने में क्या मतलब परारी है ?

जम्बुकुमार-हमारे लिये तो बस यही सर्वथा कार्यकारी है।

विनयश्री-नहीं नहीं वालम, ऐसा न कहिये, इसमें ख़्वारी है।

जम्बुकुमार-तुम्हारी तो अक्ल गई मारी है। मुझे तो इस गृहजाल में फँसा रहना पल पल भारी है।

रूपश्री-हे प्राणाधार ! गोद का छोड़ पेट के की आशा करना क्या कुछ कम मानसिक बीमारी है ? सुनिये, किसी कवि का वचन है:—

जो सुगोद का छोड़कर, करै पेट की आस।
इससे अन-जन्मा भला, बोझ मरा नव मास॥
स्वर्गों की वांछा करें, जो नहीं जानें कोक।
हम सी चतुर न पाओगे, जो ढूँढो तिहुँ लोक॥

जम्बुकुमार-सुनो,

नदिया तट इक मृतक गज, ताको कागा खाय।
नदी बाढ़ में वह चला, खात खात न अघाय॥
गजयुत जा डूबा जलध, तृष्णा के वश होय।
जो तृष्णा में नहिं फँसे, उड़ गये अवसर जोय॥

जिस कागा तृष्णा करी, डूबा सागर जाय।
मुझ डूबत को काढ़ है, हमको देहु बताय॥

पद्मश्री—

करुणासागर प्राणपति, विन्ती सुनो हमार।
डूबत विरह समुद्र में, कर गह पार उतार॥
तुम बिन हम कैसे जियें, प्राणनाथ सुन बैन।
कृपा दृष्टि बिन आपकी, तड़पेंगी दिन रैन॥

जम्बुकुमार—

कौन किसी के बिन मरे, कौन बचावनहार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी वार॥
अतट अन्ध संसार बन, घर है एक सराय।
प्राणी पन्थी आ बसें, कुई आवे कुई जाय॥
गृहरूपी तरुवर बसें, प्राणी पत्ती आय।
आयू निश के अन्त में, एक एक उड़जाय॥

कनकश्री—

निशदिन तड़पेंगी जिया, जैसे जल बिन मीन।
दया चित्त में धारिये, निठुर चित्त क्यों कीन॥

जंबुकुमार—

दया हमारे उर बसे, वीतराग गुण सार।
यह ही निश्चय दया है, और है सब व्यवहार॥

विनयश्री–

हाथ जोड़ विन्ती करें, चरण पड़ें शतवार।
कृपादृष्टि विन आपकी, दुख पावे परिवार॥
हम अवला वलहीन हैं, शरण गही तुम आय।
तुम्हरे ही आधीन हैं, मारो चाह जिलाय॥

जम्बुकुमार–

कौन किसी को मारता, कौन जिलावनहार।
आयुकर्म के अन्त में, कौन वचावनहार॥
कुटुम कवीला भ्रात मित, सुत दारा अरु साय।
तरवर की सी कोंपलें, इक आवे इक जाय॥

रूपश्री–प्राणनाथ !

सब सुख विधि ने धर दिये, क्यों इनको तज जाव।
दुःख सहो सुख ना लहो, पीछे फिर पछताव॥

जम्बुकुमार–

प्यारी चित्त लगाय के, सुनो हमारे वैन।
दुखसागर संसार यह, मूरख माने चैन॥
यह असार संसार है, देखो चित्त विचार।
तनय त्रिया तन मोह तज, होवे सुखी अपार॥

चारों स्त्रियां (रोती हुई)–हा !

तुम बिन पिया धड़के हिया, जियरा जले छाती फटे।

जल बल बदन लागा तपन, इन नेत्र से पानी बहे ॥
इक रैन के बिछुड़े से चकवा, चकवी दोनों दुख भरें।
क्यों विरह अगनी में जलाओ, नाथ हम पायन पड़ें ॥

जम्बुकुमार (समझाकर और दिलासा देकर)–

सुनो, शोकातुर होने से कोई लाभ नहीं। तुम बुद्धिमान और समझदार हो। ज़रा विचार और ज्ञान से काम लो। सुनो:-

है यह संसार असार दुःख का घर री।
यह विषय भोग दुख रोग इनसे नित डर री॥
इनमें दुख मेरु समान सुख ज्यों राई।
सो भी सब आकुलतामय पड़त दिखाई॥
इसकी उपमा इस भाँत गुरू बतलाई।
सो सुनो त्रिया दे कान कहूँ समझाई॥
इसके सुनने में प्रिये ध्यान अब धर री।
यह विषयभोग दुख खान इनसे नित डर री॥

भववन भटकत पथिक इक, हाथी काल कराल।
पीछे लाग्यो देख वह, पड्यो कूप विकराल॥
पकड़ डाल बट वृक्ष की, लटक्यो मुँह फैलाय।
ऊपर मधुछत्ता लग्यो, बूँद पड़ी मुँह आय॥
निश दिन दो चूहे लगे, काटें आयू-डाल।
नीचे अजगर फाड़ मुख, है निगोद भयजाल॥

चार सर्प चारों गती, चारों ओर रहात।
हैं कुटुम्ब माखी अधिक, चूँटत तन दिन रात॥
श्रीगुरु विद्याधर मिले, देख दुखी भव जीव।
हो दयाल टेरत उसे, मत सह दुःख अतीव॥
बूँद मधू है विषय सुख, तामें लोलुप होय।
उपकारी वच नहिं सुने, शुभ अवसर दियो खोय॥
आयु डाल कुछ काल में, कट के गिर गई अन्त।
पड़ नीचे दुख कूप में, भोगे दुःख अनगिन्त॥
पथिक मरयो दुख घोर सह, चित्त विचारो सोय।
मैं न पड़ूँ भव कूप में, कौन निकाले मोय॥

स्त्रियाँ (मिलकर रोती हुई)—

हमारे पिया मानो हमारी बात।
संयम सुख सो दुख है हमको, क्यों तुम जिया दुखात।
चन्दन सेती चिता चिनावो, दहन करो निज हाथ॥
हमारे पिया मानो हमारी बात॥
मात पिता का नेह छुड़ाकर, करो न हम से घात।
पूजन दान कीजिये हम सङ्ग, लेहु साथ निज मात॥
हमारे पिया मानो हमारी बात॥

जम्बुकुमार—

हे प्राणवल्लभा! इस थोड़ी सी ही वय में संसार की थोड़ी

थोड़ी सम्पत्ति और वैभव सर्व ही मैंने देखे और कर्णगोचर किये, परन्तु कोई वस्तु ऐसी नहीं देखी जो मानसिक दुखों से सन्तप्त प्राणियों के हृदय को सदैव के लिये सुख शान्ति दे सके।

स्वादिष्ट भोजन सर्व ही जीवों को प्रिय मालूम होता है, परन्तु क्षुधा शान्त होजाने पर वही अप्रिय लगता है।

स्त्रियों में सर्व ही पुरुषों की प्रीति है, पर सूर्य अस्त होने पर चकवा बड़ी प्रसन्नता से चकवी को त्याग देता है और रात्रि भर वियोग ही को भला जानता है।

नीम के कडुवे पत्र वही पुरुष रुचि से चबाता है जिसके शरीर में सर्प का विष विद्यमान है। परन्तु जब विष उतर जाता है तो वही पत्र उसे कडुवे लगते हैं।

मोहरूपी विष अब मेरे हृदय से दूर होगया है। इसीलिये सर्व ही विषयभोग रूपी निम्बपत्र अब मुझे कटु प्रतीत होते हैं।

अतः मैं अब उस अविनाशी आनन्द को खोजने जाता हूँ, जिससे अनन्तकाल तक भी कभी अरुचि न हो। तुम सब ही मेरे हित की चाहने वाली हो इसलिये मुझे न रोको।

एक स्त्री—

मम प्रीतम प्यारे प्राणाधारे, ज़रा तो इधर नज़र कर देख।
हम रूपवती लावण्यवती, तुम प्राणपती दिल भर कर देख॥

जम्बुकुमार—

कौन है साथी किसका जग में, दारा सुत मित सब ही ठग हैं.

सेठ दुलारी चित धर देख ।

तन धन यौवन सब असार हैं, बिजली का सा चमत्कार है.

अय बेख़बर समझ कर देख ॥

दूसरी स्त्री—

क्यों हमको छोड़ो मुँह को मोड़ो, दया को चित में धरकर देख ।

लेश न दुख है भोगन सुख है, निश्चय नहीं तो कर कर देख ॥

तुम प्रीतम प्यारे प्राणाधारे, ज़रा तो इधर नज़र कर देख ।

हम रूपवती लावण्यवती, तुम प्राणपती दिल भरकर देख ॥

जम्बुकुमार—

भोग विलासों में क्या रस है, क्षण क्षण निकसे तनका कस है,

चित में ज़ेर ज़बर कर देख ।

विषय भोग सब कड़े रोग हैं, त्याग करें बुध सो निरोग हैं,

निश्चय नहीं तो कर कर देख ॥

कौन है साथी किसका जग में, दारा सुत मित सब ही ठग हैं,

सेठ दुलारी चित धर देख ।

तन धन यौवन सब असार है, बिजली का सा चमत्कार है,

अय बेख़बर समझ कर देख ॥

तीसरी स्त्री—

वन में जाओ दुःख उठाओ, फिर पछताओ समझ कर देख।
वन की ठोकर झेलो क्योंकर, दिल को ज़रा पकड़ कर देख॥
तुम प्रीतम प्यारे प्राणाधारे, ज़रा तो इधर नज़र कर देख।
हम रूपवती लावण्यवती, तुम प्राणपती दिल भर कर देख॥

जम्बुकुमार—

मात पिता सुत सुन्दर नारी, अन्त समय कुई साथ न जारी,
चारों ओर नज़र कर देख।
यह जग सब स्वपने की माया, सुख सम्पति सब तरवर छाया,
इसको हृदय धर कर देख॥
कौन है साथी किसका जग में, दारा सुत मित सब ही ठग हैं,
सेठ दुलारी चित धर देख।
तन धन यौवन सब असार है, बिजली का सा चमत्कार है,
"चेतन" खूब समझ कर देख॥

चौथी स्त्री—

तुम्हीं हमारे प्राण हो, तुम ही मम आधार।
तुम बिन हमको प्राणपति, सब संसार असार॥

जम्बुकुमार—

तुम अबला अज्ञान हो, जानत नाहीं मर्म।
कोई न अपना जगत् में, सिवा एक जिनधर्म्म॥

चारों स्त्रियां—

इसी धर्म में दत्त चित, रहैं तुम्हारे पास।
करें आप की चाकरी, पूरें मन की आस॥

जम्बुकुमार—

कौन किसी के सँग रहे, संचित कर्म अपार।
तिनके वश पड़ जीव यह, भ्रमण करे संसार॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न साथी कोय।
घर सम्पति पर प्रगट यह, कोइ न साथी होय॥

स्त्रियां—

विना जीव यह मनुष तन, विना पुरुष की नार।
यह सब ही फीके लगें, शशि बिन रैन अँध्यार॥

जम्बूकुमार—

जहाँ संग कुछ रहत है, तहां रहत आरम्भ।
त्याग किये तें होत हैं, ज्ञानी दृढ़ स्तम्भ॥
सुन्दर नारिन के अलिक, हैं अलीक विषखान।
जो बुध इन से दूर हैं, पावैं सो निर्वान॥
त्रिया नाभि बांबी वसे, कामदेव का सर्प।
अज्ञानी को डसत है, हरे सकल तनदर्प॥
नाहिं कामनी भामनी, कामादिक हैं चोर।
तत्वज्ञान वैराग्य सब, छण में लेयँ बटोर॥

स्त्रियां—

नारी निन्दित को ? कहै, नर बिननारि न होय।
नहीं सृष्टि में आजलों, हुए नारिबिन कोय ॥
राजुल पति संग तप किया, जानत है संसार।
भव समुद्र से तिर गई, कई इक को ले लार ॥
चन्दनबाला तप किया, मन में धर व्रत मौन।
ले आज्ञा महावीर की, जानत नाहीं कौन ॥

जम्बुकुमार—

हम जानी कुछ उर बसी, ज्ञान कला की बात।
करो जो राजुल ने किया, मन में क्यों अकुलात ॥
तप संयम के ग्रहण से, ऋषभादिक चौबीस।
महिमा उनकी नित करें, इन्द्रादिक नुत शीश ॥

स्त्रियां—

अभी न त्यागो प्रेम हमारा।
कुछ दिन और रहो घरवारा ॥
तुम बिन जीवन वृथा हमारा।
कैसे हो हमरा उद्धारा ॥

जम्बुकुमार—

छोड़ो प्रेम कही तुम मानो।
मोह कर्म को विषवत जानो ॥

स्त्रियां—

धिक धिक हमरा जीवनो, धिक धिक यौवन रूप।

आप रमत संयम सहित, हम जावें किस कूप॥

जम्बुकुमार—

यह अभिलाष हमारा, सुन प्रिये यह अभिलाष हमारा।

चौरासी लख भ्रमते भ्रमते, पाया मनुपतन प्यारा।

अब यह शुभ अवसर नहिं चूकूं, छोड़ूँ यह संसारा॥

यह अभिलाष हमारा, सुन प्रिय यह अभिलाष हमारा।

मनुष देह पाना है दुर्लभ, तामें जिनकुल सारा।

अबहू चेतन जो नहिं चेते, पावे दुःख अपारा॥

यह अभिलाष हमारा, प्रियगण यह अभिलाष हमारा।

जाके उर महावीर विराजें, उसका हो उद्धारा।

मोहदीप यों मन्द होत है, ज्यों रवि ऊगत तारा॥

यह अभिलाष हमारा, सुन प्रिय यह अभिलाष हमारा।

नाती गोती वल्लभ बान्धव, क्षण में हों सब न्यारा।

परमानन्द मिलन को जग में, संयम एक सहारा॥

यह अभिलाष हमारा, प्रियगण यह अभिलाष हमारा॥

स्त्रियां—

सेठों की पुत्री हुई, ब्याहीं तुम्हरे साथ।

लिखा कर्म में योग है, कहा हमारे हाथ॥

(विदूषक का प्रवेश)

विदूषक (स्त्रियों से)—

सुनलो बिटिया बात हमारी कान लगाकर तुम झटपट।
जम्बू को हम सब कुछ जानें बड़ा हठीला है नटखट॥
तुम्हरे समझाये नहिं माने चाहे मिलाओ सौ सटपट।
सुनलो बिटिया बात हमारी कान लगाकर तुम झटपट।
अरमन जरमन लन्दन देखा फारिस अमरीका मेरठ॥
रूस रूम जापान चीन सब दुनिया में लाखों अटसट।
सुनलो बिटिया बात हमारी कान लगाकर तुम झटपट॥
जो हम चाहें इसे रोकना अभी रोक लेवें झटपट॥
पर हमको क्या ग़रज़ पड़ी बेमतलब कौन करे खटपट।
सुनलो देवी बात हमारी कान लगाकर तुम झटपट॥

अरी तुम इस बेचारे के पीछे क्यों पड़ी हो! इसके भाग्य में महलों के ये अनुपम भोग विलास हैं ही नहीं। इसका नाम भी तो आख़िर जम्बू अर्थात् शृगाल ही है न। यह तो वन ही को चाहेगा। जो तुम मुझ बूढ़े की सीख मानो तो जाओ अपने २ भवन को सिधारो। और इनके पिता जी को इनके पास भिजवा दो। सेठ जी ही डाँट डपट कर इसे सीधे रास्ते पर लायँगे।

स्त्रियां—अच्छा महाराज! आप वृद्ध पुरुष हैं। आप की आज्ञा को हम कैसे उल्लंघन कर सकती हैं।

(स्त्रियां और विदूषक जाते हैं और परदा गिरता है)

ड्राप सीन (Drop Scene)
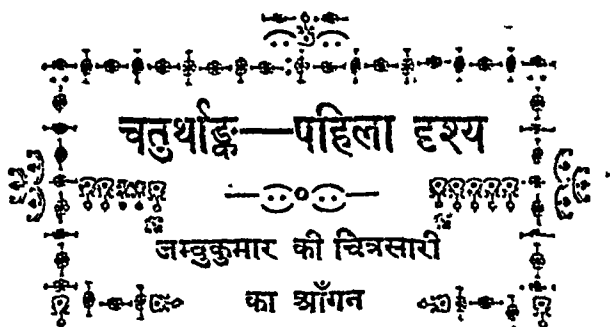
जिनमती का महल के आँगन में वड़ी घवरोहट और वेचैनी से कभी चित्रसारी की तरफ झाँकना, कभी आँगन में उदासमुख घूमना, कभी वेतावी से द्वार की तरफ को देखना और एक चोर का खड़ा नज़र आना

जिनमती (चोर को द्वार के पास खड़ा देखकर)—अरे ! अरे ! ! तू कौन ?

(चोर चुपचाप निरुत्तर खड़ा है)

अरे तू वोलता क्यों नहीं ! कौन है ?

(चोर ज़रा दवे पाँव पीछे को हटता है)

अरे भाई, तू डरे मत। मैं तुझ से कुछ न कहूँगी। तू मुझे सच वतादे कौन है और किस लिये यहाँ आया है ?

चोर—माता जी, क्या वताऊँ ! मैं एक चोर हूँ नामी, कभी

देखी नहीं नाकामी। विद्युत् चोर मेरा नाम है। चोरी करना मेरा काम है। धन की चाह से यहाँ आया पर अभाग्यवश अवसर न पाया। इसीलिये निराश हो पीछे क़दम हटाया।

जिनमती (बड़ी उदासी से)-अरे! यह बहुतेरी पड़ी है माया, इसे मत जान माल पराया। जितना उठाया जाय उठाले, मन ख़ूब ही रिझाले, लेजाकर चैन उड़ाले।

चोर-माता जी! क्यों तुम मुझे बनाती हो, क्यों मुझे शर्माती हो?

जिनमती-नहीं नहीं बेटा! मुझे यह धन दौलत और मालमता अब अच्छा नहीं लगता। मेरे सब कुछ पास है, पर मन इससे उदास है।

चोर (अचम्भे से)-क्यों, आप का मन क्यों इतना हिरास है? मैं भी बहुत देर से खड़ा देख रहा हूँ कि आप का दिल सचमुच हैरान, परेशान और बदहवास है।

जिनमती-अरे बेटा! मेरा प्राण प्यारा, नैनों का तारा, घर का उजियारा, इकलौता पुत्र जम्बुकुमार आज प्रातःकाल ही मुनि-दीक्षा लेने के लिये हठ कर रहा है। स्त्रियाँ समझा रही हैं, स्नेह में फँसा रही हैं, पर उन बेचारियों की सारी स्नेह भरी बातें बेकार जा रही हैं। यही इकलौता पुत्र मेरे घर का चिराग़ है, उसी को देख देख मेरा मन हरदम बाग़ बाग़ है। पर क्या

करूं, इस समय इसी ग़म से मेरे सीने पर दाग़ है।

रोती हुई—

हा! पुत्र से आज बिछुड़ना होगा, रात दिना दुख भरना होगा,
सूख सूख कर मरना होगा, क्या कीजे करतार।
अशुभ कर्म ने हमें सताया, पुत्र मिरे को यों बिछुड़ाया,
सर्व कुटुम से नेह छुड़ाया, पड़ी कर्म की मार।
हा करतार! हा करतार!!
धन दौलत अब क्या करना है, देख देखकर जल मरना है,
काम न कुछ इनसे सरना है, अटूट भरे भण्डार।
हा करतार! कष्ट अपार!!
इसी से धन अब मन नहीं भावे, लेले जितना लीया जावे,
मन में ज़रा खौफ़ मत खावे, मैं इस से बेज़ार।
हा करतार! दुःख निवार!! कर उद्धार!!!

चोर (दयार्द्रित होकर)—

ग़म खायना, घबरायना, तेरा हम से लखा दुख जायना,
क्यों रोवे, जलावे, सतावे जिया, ग़म खायना, घबरायना,
तेरा हम से लखा दुख जायना।
ज़र दौलत, धन सम्पत, इसपै लानत, हमको इसकी तनक अब चाह ना,
परवाय ना, ग़म खायना, घबराय ना,
तेरा हम से लखा दुख जाय ना॥

माता मत देर करो चलके दिखादो हमको।
चलके उस पुत्र से अब भेंट करादो हमको॥
मुझको आशा है कि मन फेर सकूंगा उनका।
जो न मानेंगे तो मैं साथी बनूंगा उनका॥
दुख पायना, गम खायना, तू मन में तनक घबराय ना,
तेरा हमसे लखा दुख जायना।

जिनमती (कुछ सन्तुष्ट होकर)—

चित आये, मन भाये, तेरे वचन मेरे मन भाये,
यह मेरे चित्त समाये।
मेरे हर्ष का कौन ठिकाना, तुही सच्चा हितू मैंने जाना,
जो काम करे मनमाना, आधा दूँ माल खज़ाना।
आ पुत्र से तुझे मिलाऊँ, उस पास तुझे ले जाऊँ,
चल उससे बात कराऊँ॥

(परदा गिरता है)

जम्बुकुमार का मुनिदीक्षा के लिये दृढ़ विचार करते नज़र आना और माता के प्रवेश करने पर जम्बुकुमार का खड़े होकर माता का यथा योग्य अभिवादन करना और विद्युत चोर का आकर समझाना।

जम्बुकुमार (मनमें)—

दुर्लभ दश लक्षण धरम, दुर्लभ नर पर्याय।
दुर्लभ रत्नत्रय मिलन, इन बिन निष्फल काय॥
निश्चय प्रातःकाल ही, मुनि दीक्षा लूँ सार।
मोह त्याग परिवार का करूँ अपन उद्धार॥

(माताका प्रवेश)

जम्बुकुमार--[माता के चरण छूकर और हाथ जोड़कर] पूज्य माता जी! दास के लिये अब क्या आज्ञा है?

माता—

बेटा तेरा मामा इक, गया था वह परदेश।

बारह वर्ष बितायकर, सुन शुभ लग्न सँदेश ॥
आया है स्नेह वश, ड्योढ़ी खड़ा अयार।
चाहो जो मिलना अभी, उसको लेहुँ पुकार ॥

जम्बुकुमार–मुझको क्या इन्कार।

माता (बाँदी से)—जारी शीघ्र पुकार, लाओ लार, कर सत्कार।

बाँदी (शिर झुकाकर)—हाँ सरकार, पालूं आज्ञा शिर पर धार।

{ बाँदी जाती है और द्वार पर से विद्युत चोर को साथ लाती है। }

जम्बुकुमार (विनय से)—आइये, आइये मामा जी! विराजिये।

विद्युत् चोर (बैठकर)—कुंवर जी! आप का चित्त तो प्रसन्न है?

जम्बुकुमार—हाँ, आप की कृपा से। आपका शरीर बो सकुशल है?

विद्युत्चोर (कुछ उदासी से)—हाँ, परमात्मा की कृपा से सब कुशल है, पर इस समय मेरा मन अति विकल है।

जम्बुकुमार—क्यों मामा जी! ख़ैर तो है। क्या दुख है?

विद्युत् चोर—प्रियवर कुँवर! और तो दुःख कुछ नहीं, पर तुम्हारे वेसमय के अनुचित विचारों को सुन कर चित्त शोकातुर हो रहा है।

तुम्हारी यह कुमार अवस्था, यह कोमल शरीर, यह प्यारी मनमोहनी सूरत और तिस पर भाग्योदय से प्राप्त ऐसे ऐसे सुख चैन, ऐसे ऐसे भोग विलास और इतनी अटूट धन सम्पत्ति, इन्हें लात मारकर जंगलों और बयाबानों की ख़ाक छानना कौन सी बुद्धिमानी है। आपने आख़िर ऐसी अनुचित बात चित्त में क्यों ठानी है?

जम्बुकुमार—संसार के सर्व दुःखों से छूटने की यही तो निशानी है। इसीसे यह बात मेरे मन मानी है। जाना जाता है कि आपने इसकी उत्कृष्टता आजतक नहीं जानी है। मान्यवर मामा जी! आप भूलते हैं। ज़रा विचार कर तो देखिये कि यह सर्व सांसारिक विभव और मनभावने भोगविलास कै दिन का सुहाग हैं? ज्ञानियों की दृष्टि में तो यह सचमुच काले नाग हैं। यह दुनियाँ की सुख सम्पति, यह मनोहर रागरंग, यह अटूट धन सम्पदा, यह जवानी की उमंगें, यह देवाङ्गनाओं के समान स्त्रियों के भोग विलास, यह सारा कुटुम्ब परिवार, केवल दो चार दिन की बहार है, बिजली का सा चमत्कार है। वास्तव में सब असार बल्कि दुःखों का भंडार है। स्वपने की सी माया है, जिसने इसमें मन लगाया है,

दिल उलझाया है, उसने कभी चैन न पाया है । उलटा धोखा ही खाया और पीछे पछताया है ।

विद्युत् चोर—कुँवर जी ! तुम ने जोकुछ बताया वह वास्तव में ठीक समझाया है। पर यह तो बताओ कि इसके त्याग में किसी ने कब सुख पाया है ?

जम्बुकुमार—मान्यवर ! त्यागियों के चरणों में तो बड़े २ राजे महाराजों और चक्रवर्त्तियों ने भी शिर झुकाया है, बल्कि इन्द्रादिक देवों ने भी मस्तक नवाया है। नहीं नहीं, इतना ही नहीं, किन्तु अन्त में उन्होंने भी इसी पवित्र मार्ग पर चलकर परमानन्दरूप परम सुख पाया है।

सुनिये:-

यह विषय भोग हैं कठिन रोग दुखकारा।
इन के बिन त्यागे नहिं होगा निस्तारा ॥ १ ॥

तुम समझ के देखो मातुल चित में धारो।
यह हैं सब ही दुख मूल हृदय में विचारो ॥

जिन इन को दीया त्याग हुआ उद्धारा।
इनके बिन त्यागे नहिं होगा निस्तारा ॥ २ ॥

ज्यों ज्यों इन में रतिमान लिप्त नर नारी।
त्यों त्यों बहु तृष्णा तृषा बढ़े दुखकारी ॥

विषधर डसता इकबार ये बारम्बारा।
इनके बिन त्यागे नहिं होगा निस्तारा ॥ ३ ॥

सुर नर खग इन में रचें तो दुर्गति पावें ।
सुरपति भी सेवें चरण जो इनको त्यागें ॥
जो मोहजाल में फँसें न हो छुटकारा ।
इनके बिन त्यागे नहिं होगा निस्तारा ॥ ४ ॥
इन विषय भोग में जिन मूरख सुख माना ।
तो आक के फल को आम उन्होंने जाना ॥
मत इन में फँसियो कोई कभी दुखयारा ।
इनके बिन त्यागे नहिं होगा निस्तारा ॥ ५ ॥
गज मीन भृङ्ग अरु पतँग मृगा यह प्राणी ।
इक इक इन्द्रियवश पड़ती जान गँवानी ॥
जो पञ्च इन्द्रियवश फँसे वे क्यों न गँवारा ।
इनके बिन त्यागे नहिं होगा निस्तारा ॥ ६ ॥
नरपति खगपति अरु सुरपति हू की आशा ।
पूरी नाहिं होने देते भोग विलासा ॥
'चैतन्य' जो दुखी सुख में अब चित धारा ।
इन विषय त्याग बिन नहिं होगा निस्तारा ॥
यह विषय भोग हैं कठिन रोग दुखकारा ।
इनके बिन त्यागे कैसे हो निस्तारा ॥ ७ ॥

विद्युत्चोर—जो तुमने अपने चित में यही विचारा ।
तो इतनी जल्दी क्यों त्यागो घर बारा ॥

कुछ दिन ठहरो सन्तोषो निज प्यारा।

फिर प्रियवर ! हम भी देंगे साथ तुम्हारा॥

प्रियवर ! अगर आपके मन में यही समाई है तो अभी से ऐसी क्या उतावली छाई है ? अभी तो समय बहुत है। कुछ दिन और अभी गृहस्थ के सुख चैन उड़ाइये फिर बेधड़क बनको चले जाइये और हमको भी अपना साथी बनाइये।

जम्बुकुमार—मामा जी ! ऐसी अयोग्य सलाह मुझे न बताइये। जीवन का क्या भरोसा है ? मौत हरदम सर पर सवार है : जिसे इतना भी बोध नहीं, वह पक्का गँवार है। आप समझदार होकर क्यों मुझे कुँवे में गिराते और फंदे में फंसाते हैं।

सुनिये:-

जबलग रोग न आवे नेरे, जबलग जरा न आकर घेरे।

तबलग कीजे कुछ उपकार।

जबलग बुद्धि ठिकाने रहवे, जबलग काया दग़ा न देवे।

तबलग हो सकहै उपकार।

पौरुष से जब प्राणी हारे, मौत शीर्ष पर आन पुकारे।

तब प्राणी होवे लाचार।

आग झोंपड़ी आन जलावे, तब यह मूरख कुँवा खुदावे।

"चेतन" तब किमि हो उद्धार

सब बेकार, सब बेकार॥

विद्युत्चोर-यह आपका विचार सब ठीक है। पर अपने इन माता पिता के बुढ़ापे की तरफ़ तो कुछ ध्यान दीजिये। इन बेचारी निर-अपराध नवयुवा स्त्रियों की प्रार्थनाओं को ही सुन लीजिये, इन की कुछ तो तसल्ली कीजिये या मेरे आने को ही लाज रखिये।

जम्बुकुमार-सुनिये-

सुत नित दारा भ्रातगण, मात पिता परिवार।
अपने अपने सुक्ख को, रोवे सब संसार॥
आप अकेला जन्म ले, मरै अकेला होय।
यों कबहू इस जीव का, सगा न साथी कोय॥
जो जैसे बाँधे करम, सुख दुख वैसा होय।
अपने अपने किये का, फल पावैं सब कोय॥
जहाँ जहाँ संयोग है, है वियोग तिस लार।
अटल नियम यह जगत में, कोइ न टारन हार॥

विद्युत्चोर (निराश होकर माता से)-बहिनी जी! कुँवर जी के चित्त पर तो कुछ रंग ही और चढ़ चुका है, वैराग्य मन में बढ़ चुका है, यह रंग ऐसा वैसा नहीं जिसे कोई धोसके, चित्त से खो सके। सुनियेः-

सुन बहिनी वचन हमारे।
इन्हें भोग लगें दुखभारे॥

जिम सर्प जिसे डस जावे। वह निम्ब रुची से खावे॥
जब निर्विष वह होजावे। तब कैसे निम्ब चबावे॥
त्यों राग उदय यह प्यारे। विन राग नाग हैं कारे॥

सुन बहनी वचन हमारे।
इन्हें भोग लगें दुःख भारे॥

अब यह नहिं इन्हें सुहावें। यह इनके मन नहिं भावें॥
चहे लाख वार समझावें। यह निश्चय वन को जावें॥
हम सब पच पच कर हारे। पर कुंवर न चित्त डिगारे॥

सुन बहनी वचन हमारे।
इन्हें भोग लगें दुख भारे॥

कमल पत्र पै नीर ज्यों, ठहरत नहीं लगार।
त्यों इनके मन विरक्त पै, जमे न कुछ इकवार॥
यातें इनके मोह को, दीजे अब छिटकाय।
करना हो सो कीजिये, ये ही एक उपाय॥

माता (शोकातुर होकर)—

वृद्ध मात और बाल त्रिय, तजकर क्यों वन जात।
देख अवस्था आपनी, अरु व्यवहारिक बात॥

जम्बुकुमार—

मैं जाऊँ सब त्याग के, सम्पति पुर भण्डार।
भोगो विलसो विभव को, छोड़ो हम से प्यार॥

{ सेठ अर्हद्दत्त का प्रवेश
और सब का यथायोग्य विनय करना }

जम्बुकुमार--(पिता को आता देख आगे बढ़कर और चरण छूकर हाथ जोड़े हुए)--पूज्य पिता जी, प्रणाम।

पिता--(प्रेम से शिर पर हाथ रख कर)--चिरंजीवी रहो पुत्र।

जम्बुकुमार--पूज्य पिता जी! मैं पूज्य माता जी से आज्ञा लेकर स्वयम् ही आपकी सेवा में अभी अभी उपस्थित होने वाला था कि इतने ही में आप ही ने इतना कष्ट उठाया। देखिये सूर्य उदय हो आया है। अपने वचनानुसार बस अब मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं अपने जीवन के अमूल्य समय को अब व्यर्थ न खोकर आज ही मुनिदीक्षा ग्रहण करलूँ।

पिता (समझाकर)--

हे प्रिय पुत्र कठिन बनवासा। क्षुधा तृषादिक के बहु त्रासा॥
जो नहिं पले साधु आचारा। तौ मुनिवेश लजाओ सारा॥

जम्बुकुमार--

पिता अङ्ग यह हमरा नाहीं। भूख प्यास पुद्गल परछाहीं॥
सहूँ परीषह मैं दिन राता। दृढ़चित व्रत पालूँ हे ताता॥

पिता--

कर्म उदयवश उपजें रोगा। आवें याद महल के भोगा॥
...न डिग जो आसन टल जावे। तौ मुनिव्रत नहिं पलने पावे॥

जम्बुकुमार—

तन ममता पलभर करूँ नाहीं। रहूं रत नित्य चिदानँद माहीं॥
फिर कैसे मन डिगे हमारा। निश्चय उतरूँ भवदध पारा॥

पिता—

जब रहो वन विकराल में, तहँ सिंह स्यार सतावहीं।
कानों में बीछू बिल करें, अरु सर्प तन लिपटावहीं॥
दें कष्ट प्रेत पिशाच आन, अँगार पत्थर डार के।
कैसे सुथिर मन तब रहे, जप तप व्रतादिक धार के॥

जम्बुकुमार—

इन से अधिक बहु दुख सहे, बहुबार पड़पड़ नरक में।
यह कष्ट कितने हैं पिता, नश जाँय सब इक छणक में॥
जीवन मरण के फन्द में, जिय कर्मवश बहु दुख सहे।
जो स्ववश सह समभाव से, इक बार तौ भवदध तिरै॥

पिता—

गजराज अरु मृगराज को, जो बाहुबल से दल मलें।
रणभूमि में बहु सूरमा, भू पै पटक पगतल दलें॥
पर काम के बानों से छिद, छिद इन भी शिर नीचा किया।
ब्रह्मा, मुरारी, शिव, हरी, इनका भी मन डिग डिग गया॥

तातें मेरी सीख को, हृदय धरो हे वीर।
तुम सुकुमार शरीर हो, मन होजाय अधीर॥

और सुनो, आचार्यों का वचन है:—

न पिशाचोरगा रोगा, न दैत्य ग्रह राक्षसाः ।
पीडयन्ति तथा लोकं, यथाऽयं मदनज्वरः ॥
प्रवृद्धमपि चारित्रं, ध्वंस यत्याशु देहिनाम् ।
निरुणाद्धिश्रुतं सत्यं, धैर्यंच मदनव्यथा ॥
पीडयत्येव निःशङ्को, मनोभूर्भुवनत्रयम् ।
प्रतीकार शतेनापि यस्य भंगो न भूतले ॥

अर्थात् जगत् को जैसा कष्ट यह कामज्वर देता है ऐसा कष्ट कोई पिशाच, सर्प, रोग आदि नहीं देते और न दैत्य, ग्रह राक्षस आदि ही देते हैं।

इस कामदेव की व्यथा जब शरीर में उठती है, तब बहुत दिवस के पाले हुए चारित्र को यह क्षण भर में ध्वंस कर देती है। एवम् शास्त्राध्ययन, धैर्य और सत्य-भाषणादि में भी बाधा डाल देती है।

यह कामदेव निर्भय होकर तीनों लोक को दुःखित करता है और इस पृथ्वी पर सैकड़ों उपाय करने पर भी इसका विध्वंस नहीं होता।

इसीलिए हे प्रिय पुत्र ! ज़रा मन में विचारो कि यह कितना दुर्लङ्घ और कठिन मार्ग है।

जम्बुकुमार (हाथ जोड़ कर)—आपका वचन सत्य है। परन्तु सुनिये, ऐसा भी तो वचन है:—

नाल्प सत्वै र्ननिःशीलै, र्नदीनैर्नाक्षनिर्जितैः ।
स्वप्नेऽपि चरितुं शक्यं, ब्रह्मचर्यमिदं नरैः ॥
स्मर व्याल विषोद्गारै, र्वीक्ष्य विश्वं कदर्थितम् ।
यमिनः शरणं जग्मु, र्विवेक विनता सुतम् ॥

अर्थात् जो अल्पशक्ति पुरुष हैं, शीलरहित हैं, दीन हैं, इन्द्रियों के आधीन हैं वे इस ब्रह्मचर्य को धारण करने को स्वप्न में भी समर्थ नहीं हो सकते। परन्तु

काम रूपी सर्प के विषोद्गार से पीड़ित समस्त जगत को देखकर संयमी मुनिगण विवेकरूपी गरुड़ की शरण ग्रहण कर लेते हैं।

सो हे पूज्य पिता जी! कामरूपी सर्प के विषोद्गार से बचने के लिये मैंने भी उसी विवेकरूपी गरुड़राज की शरण ली है। आप के चरणों के प्रताप से मेरा मन इतना निर्बल नहीं है कि इसपर वह जगत्विजयी, या यों कहिये कि कायरविजयी कामदेव अपना कुछ भी प्रभाव डाल सके। उसका बल, उसका जाल या उसका मंत्र मनोबल रहित, कायर और शक्तिहीन पुरुषों, पर ही काम कर जाता है। देखिये ना—

निर्बल पै बल सब करैं, सबल पै बल नश जाय।
पवन अग्नि को नहिं नशे, दीपक देत बुझाय॥

अतः पिता जी ! मेरी ओर से व्रतभङ्ग होने के सन्देह को दूर कीजिये और निःसंकोच इस अपने प्रिय पुत्र को अनादि कर्म बन्धन के फन्द से छूटने के उपाय में लगने की शीघ्र आज्ञा दीजिये।

पिता—(जम्बुकुमार को सर्व प्रकार सुदृढ़ देखकर)—अच्छा प्रियपुत्र, तेरी ऐसी ही इच्छा है तो अपनी माता की आज्ञा लेकर अपना कार्य सिद्ध कर।

जम्बुकुमार (माता से)-माता जी ! बस अब आप भी आज्ञा दीजिये। यदि आपको इस अपने प्रिय पुत्र से सच्चा प्रेम है तो इसे मोहफन्द में बांध कर अब अधिक कष्ट में न फँसाइये। अपने इस प्रिय पुत्र के हाथ से अमृत का कटोरा छीनकर विष का प्याला न पिलाइये।

माता—प्रियपुत्र !

वृद्ध मात पित बाल त्रिय, तजकर तू वन जात।
तुझ बिन आरत-ध्यान में, कठिन कटैं दिन रात॥

जम्बुकुमार—

जो तुम आरत-ध्यान से, बचना चाहो मात।
तजके सब खटराग को, संयम क्यों न लहात॥

माता—

मैं ज्ञानी तू ना रहे, मन में दृढ़ता धार।
जाव पुत्र संयम लहो, करो अपन उद्धार॥

स्त्रियां (शोकातुर होकर)—

दिये दुख ये करम ने भारे।
छुटे हम से प्रीतम प्यारे॥

यह कर्म महा दुखदाई। बड़े शत्रु महा अन्याई॥
लख चौरासी में भाई। भिरमावें अन-गिनताई॥
यहां किसकी पार बसारे। सुर नर मुनि सब ही हारे।

मोह कर्म इन का राजा रे।
दिये दुख ये करम ने भारे॥

व्रत नियम हमें अब धरना। तौ होय नहीं दुख भरना॥
यह कार्य हमें अब करना। जिनदेव का लेवें शरना॥
दुख सागर में जिन डारे। उन का छूटे खटका रे॥

त्रिय जौन महा दुखियारे।
दिये दुख ये करम ने भारे॥

यह जौन न फिर हम पावें। परमातम से लौ लावें॥
उस ही से ध्यान लगावें। नर जन्म पाय शिव जावें॥
"चेतन" अब यहि करना रे। भवसागर से तरना रे॥

छुटे जन्म और मरना रे ।
दिये दुख ये करम ने भारे ॥
(परदा गिरता है)
ड्रापसीन [Drop Scene]
(सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार—

देखो ज्ञान का पन्थ निराला ॥ टेक ॥
आत्मज्ञान विन हृदय रहत नित, मोह का घोर अँध्याला ।
निज स्वरूप के ज्ञान होत ही, मन विच होत उजाला ॥
देखो ज्ञान का पन्थ निराला ॥ १ ॥
राग उदय विषयन में जिय हो, विषय अन्ध मतवाला ।
ज्ञान विराग मार्ग पावत ही, तजत विषय-जंजाला ॥
देखो ज्ञान का पन्थ निराला ॥ २ ॥
अध्यातम-रस चाख कुई नहिं, पिये विषय विष-प्याला ।
तोड़ फन्द सब मोह जाल के, मुक्ति-मार्ग पग डाला ॥
देखो ज्ञान का पन्थ निराला ॥ ३ ॥
मुनिव्रत धार जपत नितप्रति ही, आतमरूप की माला ।
नित अध्यातम-रस पीवत पीवत, तृप्त न होय त्रिकाला ॥
देखो ज्ञान का पन्थ निराला ॥ ४ ॥
धर्म अरु शुक्ल ध्यान वल पाकर, पूर्ण ज्ञान उजियाला ।
तोड़ कर्मबन्धन सब "चेतन", सिद्ध स्वरूप सम्हाला ॥
देखो ज्ञान का पन्थ निराला ॥ ५ ॥
(परदा गिरता है)
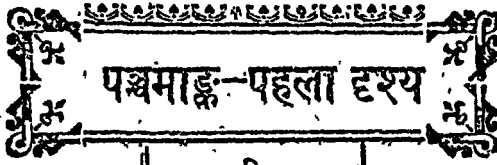
{ प्रातःकाल जम्बुकुमार का श्री जैन मन्दिर में जाकर जिन दर्शन करते नज़र आना }

जम्बुकुमार (साष्टाङ्ग नमस्कार करता हुआ)—

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति हराय नाथ।
तुभ्यं नमः क्षिति तलामल भूषणाय॥
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय।
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि शोषणाय॥

(हाथ जोड़कर सविनय)

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पाप नाशनम्।
दर्शनं स्वर्ग सोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम्॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्र हस्ते यथोदकम्॥
वीतराग मुखं दृष्ट्वा, पद्मराग समप्रभम्।
नैक जन्म कृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति॥
दर्शनं जिन सूर्य्यस्य, संसार ध्वांत नाशनम्।

बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थ प्रकाशनम् ॥
दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृत वर्षनम् ।
जन्मदाह विनाशाय, वर्द्धनं सुख वारिधेः ॥
जीवादि तत्व प्रतिपादकाय । सम्यक्त मुख्याष्ट गुणाश्रयाय ।
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय । देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥
चिदानन्दैक रूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्मा प्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात्कारुण्य भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥
नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्ति, जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे ॥

{ जम्बुकुमार निम्न श्लोक पढ़ता हुआ साष्टाङ्ग नमस्कार करता है }

नमः श्री वर्द्धमानाय, निर्द्धूत कलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥
अलंध्यं त्रिजगत सारं, यस्यानन्त चतुष्टयम् ।
नमस्तस्मै जिनेन्द्राय, महावीराय तायिने ॥ २ ॥

(पटाक्षेप)

वन के मध्य एक स्वच्छ पवित्र शिला पर बैठे हुए
श्रीसुधर्माचार्य गुरु के सन्मुख जम्बुकुमार का बड़ी
विनय के साथ खड़ा नज़र आना और
दोषालोचना पूर्वक मुनिदीक्षा ग्रहण
करने की प्रार्थना करना

नोट—इस दृश्य में किसी मनुष्य को मुनि का रूप न देकर उनकी जगह एक ऊँचे स्थान पर पद्मासनयुक्त कोई अप्रतिष्ठित (सप्रतिष्ठित नहीं) जिनप्रतिमा ढाई-तीन फिट ऊँची पूरे क़दकी काष्ठादि की स्थापित करें और अप्रतिष्ठित होने पर भी किसी समय अविनय न करें। अथवा किसी मठ या मंदिर का आकार दिखाकर उसमें बिना किसी प्रतिमा के ही गुरु सुधर्माचार्य की काल्पनिक मूर्त्ति के सन्मुख जम्बुकुमार मुनिदीक्षा की प्रार्थना करे।

जम्बुकुमार (साष्टांग नमस्कार करके)—

अगम अथाह अतट संसारा। तुम बिन कौन उतारे पारा॥
पार भवोदध करो कृपाला। आप स्वभाविक दीनदयाला॥१॥

सुनिये गुरु विनती म्हारी। हम दोष किये अति भारी॥
तिन की अब निर्वृत्ति काजा। तुम शरण ग्रही मुनिराजा॥२॥

भव भव अघ बहु मैं कीने। अगणित नित पाप नवीने॥
क्रोधादि कषायन फँस के। अघ कीने बहु हँस हँस के॥३॥
मिथ्यत्व सेय अघ कीने। वचनें नहीं जात कहीने॥
चित में करुणा नहिं धारी। निर्दय हो घात विचारी॥४॥

त्रस थावर जीव सताये। बहु पाप किये मनभाये॥
तिनकी कहुँ कौलों कहानी। तुम जानत सब मुनि ज्ञानी॥५॥
मैं तो तुम शरण लही है। सेवा तुम चरण गही है॥
इन्द्रादिक पद नहीं चाहूँ। विषयन में नहीं लुभाऊँ॥६॥
मुनि दीक्षा मोकों दीजे। रागादिक दोष हरीजे॥
आज्ञा पितु मात की लीनी। ममता सब की तज दीनी॥७॥

हे गुरु मैं तुम चरण की, शरण ग्रही है आज।
त्याग मोह देहादि का, साधूं आतम काज॥८॥

(सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार—सभ्यगण !

संसार विजयी काम को, जिस कामविजयी ने जया।
वह धर्मवीर कुमार तज, घरबार "जिनमंदिर" गया॥
श्रीगुरु "सुधर्माचार्य" के चरणों का जा शरण लया।
बहु हर्षयुत मुनिव्रत ग्रहे कर्मों से युध करता भया॥
चतुर्विंशति घर में रहा, वीस वर्ष तप धार।
लगभग चालिस वर्ष लौं, पूर्ण ज्ञान विस्तार॥
बहु जन को उपदेश दे, तारे दयानिधान।
चौरासी की आयु में, पाया पद निर्वान॥
मात पिता चारों त्रिया, अरु विद्युत्चर चोर।
त्याग तृणवत् संपति विभव, व्रत ले तप कर घोर॥
छटे स्वर्ग पितु मातु द्वय, सोलहम में चहुं नार।
विद्युत्प्रभ सर्वार्थसिध, पहुंचे दृढ़ तप धार॥
सुख संपति वैभव अतुल, अरु आनन्द अपार।
नरभव के सुख भोग सब, होंय भवोदध पार॥
दर्शक वाचक भव्य जन, इस भव पर भव मांहि।
"चेतन" सुख नित भोग कर शीघ्र मोक्षपद पांहि॥

इति
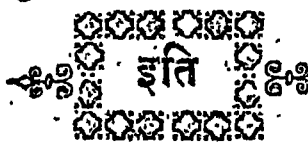
नाट्य परिभाषायें

(Dramatic Technicalities)

नोट—जो महानुभाव नाट्यकला सम्बंधी अथवा काव्य रचना, काव्य के अन्यान्य भी अनेक भेद उपभेद, काव्य रस, काव्यगुण, काव्यदोष, काव्यरीति, काव्यालंकार, न्यायलंकार आदि हिन्दी साहित्य के अनेक अंगोपाङ्ग सम्बन्धी विशेष ज्ञान प्राप्त करना चाहें वे इसी "जम्बु-कुमार नाटक" रचयिता कृत "हिन्दी व्याकरण शब्दरत्नाकर" नामक ग्रन्थरत्न देखें।

नट (Actor)-किसी अन्य व्यक्ति का रूप धारण करके उसी के कार्यों का अनुकरण करने वालों को 'नट' कहते हैं।

नटाचार्य (The Chief Actor)—नाटक की सारी व्यवस्था करने और सब पात्रों को यथोचित रूप देकर उनसे अभिनय कराने वाले को "नटाचार्य" कहते हैं।

सूत्रधार (The Manager or Chief Actor)-नटाचार्य ही को "सूत्रधार" भी कहते हैं, जिसके हाथ में नाटक सम्बन्धी सर्व सूत्र रहते हैं।

नटी (The Chief Actress)-सूत्रधार की स्त्री को 'नटी' कहते हैं।

नाटक (A Play)-नट नटी के कर्म को 'नाटक' कहते हैं।

नाट्य (The Art or Science of Acting)-नाटक की कला या विद्या को 'नाट्य' कहते हैं।

रूपक (A Drama, or one of the two main Divisions of a Drama)-नाटक ही का दूसरा नाम 'रूपक' भी है।

किसी २ की सम्मति में "रूपक" और "उपरूपक" यह नाटक के दो भेद हैं, जिन में से रूपक १० उपभेदों में और उप-रूपक १८ उपभेदों में विभक्त हैं।

नाट्य शास्त्र (Dramaturgy, or a Work of the Dramatic Science)-जिस ग्रन्थ में नाटक सम्बन्धी नियमोपनियमादि दिये गये हों।

नाटकाचार्य (A Dramatist)-नाट्य शास्त्र के रचयिता को "नाटकाचार्य" कहते हैं।

अभिनय (A Theatrical Action)-नाटक में किसी अन्य व्यक्ति के कार्यों का जो तद्वत अनुकरण किया जाता है उस अनुकरण ही को "अभिनय" कहते हैं।

पात्र (Dramatis Personae, Dramatic Personages)-नाटक में जिन भूतपूर्व पुरुषों के कार्यों का अनुकरण किया जाता है उन्हें (अथवा अनुकरण करने वालों को भी) "पात्र" वा 'नाटक पात्र' कहते हैं।

नायक (The Hero of a Drama)-नाटक पात्रों में से मुख्य पात्र को जिसके नाम से प्रायः नाटक का नाम प्रसिद्ध होता है "नायक" या "नाटक नायक" कहते हैं। जैसे-रामायण नाटक में "राम"।

नायिका (The Heroine)-नाटक में यदि कोई स्त्री भी

मुख्य पात्र हो तो उसे 'नायिका' कहते हैं। जैसे—रामायण नाटक में "सीता"।

उपनायक (Another Hero, inferior to the chief one)—द्वितीय गौणनायक को (यदि कोई हो) 'उपनायक' कहते हैं। जैसे—रामायण नाटक में 'लक्ष्मण'।

प्रतिनायक (A Rival or Opponent to the Hero)—नायक के प्रतिपक्षी को (यदि कोई हो जैसा कि प्रायः वीर रस युक्त नाटकों में होता है) प्रतिनायक कहते हैं। जैसे—रामायण नाटक में 'रावण'।

पारिपार्श्विक (An Assistant of the Chief Actor or Manager of a Play, one of the Interlocutors in the Prologue)—सूत्रधार के सहायक को "पारिपार्श्विक" कहते हैं।

पीठमर्द (A close Companion of the Hero)—नायक के साथी को 'पीठमर्द' कहते हैं।

विदूषक (A Jocular, Jocose or Catamite)—नायक के मित्र को जिसका काम प्रायः लोगों को हँसा कर उन्हें प्रसन्न करना होता है "विदूषक" कहते हैं।

विट (A Witty & Artful Companion)—बात चीत करने में कुशल, वेश आदि धारण करने में चतुर और धूर्त्तता में निपुण पुरुषों को 'विट' कहते हैं जो शृङ्गार रस सम्बन्धी कार्यों में नायक या नायिका का सहायक होता है।

चेट—विट को ही 'चेट' भी कहते हैं।

रङ्गभूमि (A Theatrical Stage)—अभिनय दिखाये जाने के स्थान को 'रङ्गभूमि' या 'रङ्ग स्थल' कहते हैं ।

नेपथ्य (The Part behind the Stage)-रंग भूमि के पीछे का भीतरी भाग जहां से नाटक पात्र अपना अपना रूप धारण करके रंगभूमि में आते हैं 'नेपथ्य' कहलाता है ।

नाट्यशाला (Theatre)-रंगभूमि और नेपथ्य के संयुक्त स्थान को "नाट्यशाला,, या "रंगशाला" कहते हैं ।

जवनिका (A Curtain)-नाटक के किसी विभाग (अङ्क) की समाप्ति पर रङ्गभूमि को ढांकने के लिये अथवा कोई नवीन दृश्य दिखने के लिये रंगभूमि में जो चित्रपट डाला जाता है उसे "जवनिका" अथवा 'परदा' कहते हैं ।

बाह्यपट (Outer Curtain, Drop Scene)-जो जवनिका रङ्गभूमि के आगे ढाँकने के लिये डाली जाती है उसे बाह्यपट कहते हैं ।

अंतःपट (Inner curtain)-जो जवनिका रंगभूमि में कोई दृश्य दिखाने के लिये डाली जाती है उसे 'अन्तःपट' कहते हैं ।

प्रतिकृति (A Reflection)-किसी चित्रित वस्त्रादि द्वारा दिखाई गई नदी, पर्वत, वन, उपवन, या प्रासाद आदि की प्रतिच्छाया को "प्रतिकृति" कहते हैं ।

अंतःपटी-प्रतिकृति ही को "अन्तःपटी" भी कहते हैं ।

पटाक्षेप (Dropping a curtain)-जवनिका के गिराये जाने को "पटाक्षेप" कहते हैं ।

वेशभूषा (Suitable decoration to disguise)—किसी पात्र के रूप को वेश, और वेश की यथोचित सजावट को "वेश-भूषा" कहते हैं ।

अङ्क (An Act or a Portion of a Play)—नाटक के विभागों में से प्रत्येक को 'अङ्क' कहते हैं।

गर्भांक (An Interlude during an Act)—अङ्क के अंतर्गत सूत्रधार-कृत मङ्गल और प्रस्तावना आदि का जो प्रथम विभाग होता है उसे "गर्भांक" कहते हैं।

पताकास्थान (An Intimation of an Episodical Incident)—वर्ण्य वस्तु में चमत्कार लाने के लिये जहां करना कुछ हो और कोई आकस्मिक कारण विशेष दिखाकर कुछ और ही करने के लिये बाधित होना दिखाया जाय तो इस कार्य को 'पताकास्थान' कहते हैं। नाटक में यह 'पताकास्थान' कई प्रकार से लाया जाता है।

अर्थोपक्षेपक (An Introductory or Describing Scene) नाटक में उससे सम्बन्ध रखने वाली जो जो बातें किसी अनुकरण-द्वारा प्रत्यक्ष दिखाने योग्य न हों अथवा दिखाना अभीष्ट न हो परन्तु उनकी सूचना देना आवश्यक हो तो ऐसी सूचनाएं सूत्रधार द्वारा यथा अवसर दी जाती हैं। इन सूचनाओं ही को "अर्थोपक्षेपक" कहते हैं।

(१) नेपथ्य से जो सूचना दी जाती है उसे 'चूलिका' कहते हैं।

(२) किसी अङ्क के अन्त में अगले अङ्क में होने वाली बातों की जो सूचना कभी कभी पात्रों द्वारा दी जाती है उसे 'अङ्कावतार करते हैं।

(३) अङ्क में जिन बातों का वर्णन है उनके कारण की

सूचना को 'अङ्कमुख' कहते हैं।

(४) पहले हुई या आगे होने वाली बातों की सूचना को 'विष्कंभक' कहते हैं।

(५) किसी नीच पात्र द्वारा दी जाने वाली अतीत या अनागत बातों की सूचना को 'प्रवेशक' कहते हैं।

नांदी (A Eulogy, or An Auspicious Introduction at the beginning of a Drama)—नाटक के प्रारम्भ में सूत्रधार द्वारा जो मंगलाचरण किया जाता है उसे 'नान्दी' या 'नान्दी पाठ' कहते हैं। सूत्रधार को भी कभी कभी 'नान्दी' कहते हैं।

प्ररोचना (A Favourable & Stimulative Introduction)—मंगलाचरण के पश्चात् सूत्रधार नाटक की प्रशंसादि द्वारा जो दर्शकों को नाटक देखने के लिये उत्सुक करता है। उसे 'प्ररोचना' या 'सभापूजा' कहते हैं।

प्रस्तावना (A Prologue or Prelude)—मंगलाचरण और प्ररोचना के पश्चात् सूत्रधार और नटी में जो नाटक प्रारम्भ करने के सम्बन्ध में कुछ बात चीत होती है उसे 'प्रस्तावना' या "आमुख" कहते हैं।

भाण (A Damatic Composition containing instructive Mimicry, Sarcasm, etc.)—धूर्त और कुशील लोगों का चरित दिखा कर दर्शकों को हँसाने और वैसे आचरण से बचाने की शिक्षा देने के लिये जो दृश्य दिखाया जाता है उसे 'भाण' कहते हैं।

प्रहसन (A Dramatic Composition causing hearty

laughter)—'भाण' के समान जिस दृश्यका मुख्य उद्देश्य हँसना हँसाना और दर्शकों को प्रसन्न करना ही होता है उसे 'प्रहसन' कहते हैं

नाट्य रासक (Amorous Pastimes with sportive-dancing etc:)—अनेक प्रकार के ताल और लय सहित तथा नृत्य और गान संयुक्त दृश्य को जिसमें शृङ्गार तथा हास्य रस की प्रधानता होती है 'नाट्य रासक' कहते हैं।

नोट १—रासलीला और स्वाँग आदि भी जो बिना 'यवनिका' आदि दिखाये जाते हैं नाट्य कलाही के भेदों में गाभत हैं-

नोट २—नाट्य के मुख्य दो भेद रूपक और उपरूपक हैं

रूपक के १० मूल भेद—नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अङ्क, वीथी और प्रहसन हैं।

उपरूपक के १८ मूल भेद—नाटिका, त्रोटिका, गोष्ठी, सट्टक, नाट्य रासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य प्रेंखण, रासक, संलापक, श्रीगदित, शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणिका, हल्लीश और भाणिका हैं।

इनके अतिरिक्त नाट्य ग्रन्थों में नाट्य के और भी अनेक भेदोपभेद और नाटक सम्बन्धी ५ सन्धि, ४ वृत्त, ६४ संध्यंग, ३६ लक्षण और ३३ नाट्यालंकार तथा नायकों के १४४ भेद और नायकाओं के भी अनेक भेदोपभेद आदि गिना कर उनके लक्षण और स्वरूपादि का सविस्तार निरूपण पाया जाता है। यहाँ पाठकों की जानकारी के लिये नाट्यकला सम्बन्धी थोड़े से प्रसिद्ध पारिभाषिक शब्दों का केवल दिग्दर्शन कराया गया है। विशेष जानने के आकांक्षी बड़े बड़े नाट्य ग्रन्थों का अवलोकन करें।

स्वल्पार्घ ज्ञानरत्नमाला

के नियम

१—इस माला के प्रत्येक रत्न का स्वल्प मूल्य रखना इस का मुख्य उद्देश्य है।

२—जो महाशय ।।=) शुल्क (प्रवेश फीस) जमा कराकर माला के सर्वग्रन्थरत्नों के, या १।) जमा कराकर अभीष्ट (मन चाहे) ग्रन्थों के स्थायी ग्राहक वन जाते हैं, उन्हें माला का प्रत्येक ग्रन्थरत्न पौने मूल्य में ।।।) दे दिया जाता है।

३—ज्ञान दानोत्साही महानुभावों को धर्मार्थ बाँटने के लिये किसी ग्रन्थरत्न की कम से कम १० प्रति लेने पर ।–), २५ प्रति लेने पर ।=), १०० पर ।≡) और २५० पर ।।) प्रति रुपया कमीशन दिया जाता है।

४—जो दानोत्साही महानुभाव ज्ञानदानार्थ विना मूल्य बाँटने के लिये इस ग्रंथरत्नमाला में प्रकाशित होने वाले किसी भी रत्न की कम से कम १०० प्रतियों के ग्राहक उसके प्रकाशित हो चुकने से पहले ही बन जाते हैं, उनका शुभ नाम भी उनकी ली हुई प्रतियों की संख्या सहित सब प्रतियों के टाइटिल पेज पर छाप दिया जाता है और नियम न० ३ के अनुकूल मूल्य भी बहुत कम लिया जाता है। और जो महानुभाव कम से कम २५० प्रति लेते हैं वे अगर चाहें तो अपनी ली हुई प्रतियों में अपने ही खर्च से अपना संक्षिप्त चरित अपने फोटो सहित या फोटो रहित लगवा सकते हैं।

"स्वल्पार्घ ज्ञानरत्नमाला" में आजतक

❀ प्रकाशित ग्रन्थ-रत्न ❀

(१) प्रथम रत्न—"वर्त्तमान चतुर्विंशति जिनपंचकल्याणक पाठ (भाषा)"—यह पाठ तीर्थङ्कर क्रम से केवल २५ (२४ + १) पूजाओं का संग्रह नहीं किन्तु प्रत्येक तीर्थङ्कर के प्रत्येक कल्याणक की अलग २ कल्याणक क्रम से १२१ (२४ × ५ + १ = १२० + १) पूजाओं का संग्रह कविवर वृंदावन जी के जीवनचरित्र और जन्मकुण्डली आदि सहित है। यह पाठ आज तक अन्य किसी स्थान से भी प्रकाशित नहीं हुआ। प्रत्येक श्री जैनमन्दिर के लिये इसे मँगाने की बड़ी आवश्यकता है। दानोत्साही महानुभावों को इसकी अधिक से अधिक प्रतियाँ मँगाकर श्री जैनमन्दिरों में बाँटकर पुण्यलाभ उठाना चाहिये। निछावर सजिल्द केवल ॥=)।

(२) द्वितीय रत्न—"श्री वृहत् जैन शब्दार्णव" (दि जैन एन साईक्लोपीडिया या जैन विश्वकोष The Jain Encyclopaedia) प्रथम खण्ड—यह महान् ग्रन्थ प्रथमानुयोग, चरणानुयोग, करणानुयोग और द्रव्यानुयोग इन चारों ही अनुयोगों तथा पूजा पाठ, यन्त्र मन्त्र, व्रत विधान, व्रतोद्यापन, गणित, ज्योतिष आदि सम्बन्धी सब प्रकार के शब्दों के अर्थ और उनकी विस्तृत व्याख्या का एक अपूर्व और अद्वितीय भंडार है। इस एक ही महान् ग्रथरत्न की स्वाध्याय कर लेने से सैकड़ों ही नहीं किन्तु सहस्रों जैनग्रंथों की स्वाध्याय का लाभ प्राप्त हो सकता है। हिन्दी जैन गज़ट, अँग्रेजी जैन गज़ट, जैन मित्र, जैन जगत्, वीर इत्यादि जैन समाचार पत्रों ने तथा माधुरी आदि प्रसिद्ध जैनेतर समाचार

पत्रों तक ने भी मुक्तकण्ठ से इस महत्वपूर्ण ग्रंथरत्न की बड़े ही उत्तम शब्दों में प्रशंसा की है और जैनधर्म सम्बन्धी प्रत्येक विषय का ज्ञान प्राप्त करने में पर्याप्त सहायता करने को सर्व साधारण के लिये इसे बड़ा उपयोगी बताया है, यहाँ स्थानाभाव से उन समाचारपत्रों के शब्दों को (जो किसी २ में तो कई कई कालम या कई पृष्ठों में हैं) उद्धृत नहीं किया जासकता, किन्तु तौ भी जो महानुभाव चाहें वे उपरोक्त पत्रों के निम्नोक्त अंक हाथमें उठाकर पढ़ें—[१] हि० जैनगज़ट कलकत्ता, ता० १९-१२-२४ [२] अं० जैनगज़ट मद्रास, जून [३] जैन मित्र, सूरत, ता० ४-६-२५ [४] जैन जगत, अजमेर ता० १६-१०-२५ व ता० १-५-२६ [५] वीर बिजनौर, वर्ष २ का विशेषांक नं० ११-१२ [६] माधुरी, लखनऊ, आषाढ़ सं० १९८२, इत्यादि ।

इन समाचार पत्रों की समालोचना पढ़ लेने पर आप को ज्ञात होजायगा कि प्रत्येक श्री जैन मन्दिर, प्रत्येक जैन पाठशाला, प्रत्येक जैन व जैनेतर लायब्रेरी (पुस्तकालय) आदि के अतिरिक्त प्रत्येक हिन्दी पढ़े जैन गृहस्थ के घर में इस ग्रन्थरत्न की कम से कम एक एक प्रति अवश्य मौजूद रहने की कितनी बड़ी आवश्यकता है । निछावर केवल ३।), सजिल्द ३॥) व ४)

(३) तृतीय रत्न-"अग्रवाल इतिहास"—कई प्रमाणिक ग्रंथों व जैन पट्टावलियों आदि के आधार पर अग्रवाल जाति और उसकी सर्व शाखाओं का लगभग ७ हज़ार वर्ष से पूर्व का आजतक का सर्वांगपूर्ण और शिक्षाप्रद इतिहास। मूल्य केवल ≡)

(४) चतुर्थरत्न-"सं० हिन्दी व्याकरण शब्दरत्नाकर"—यह हिन्दीव्याकरण का तथा छन्द, काव्य, अलङ्कार आदि का एक

महान् शब्दकोष है, जिसमें हर पारिभाषिक शब्द के लिये उसका पर्यायवाची अँग्रेज़ी शब्द भी अँग्रेज़ी ही अक्षरों में हिन्दी परिभाषा व उदाहरण के साथ २ दे दिया गया है। यह बड़ा उपयोगी और अपने ढङ्ग का नवीन, अपूर्व और अद्वितीय व्याकरण ग्रन्थ होने से गत ज्येष्ठ १९८३ की 'माधुरी' पत्रिका इसे हिन्दी साहित्य में एक भारी अभाव की पूर्ति करनेवाला ग्रन्थरत्न बतलाती है। मूल्य केवल १)

(५) पंचमरत्न-"चैतन्य परिचय"—उपरोक्त व निम्नोक्त ग्रन्थों के लेखक महानुभावका सचित्र जीवनचरित्र। मूल्य ≡)॥,।)

(६) षष्ठम रत्न-"आश्चर्यजनक स्मरणशक्ति और उसके अद्भुत करतब"—मूल्य ≡)

(७) सप्तम रत्न—"श्रीऋषभपुराण" (छन्दोबद्ध)—मूल्य ।) माला के ग्राहकों को विना मूल्य।

(८) अष्टम रत्न—संक्षिप्त आदिपुराण—सारे श्री आदि पुराण जी का बड़ा उत्तम सार। निछावर केवल ॥।)

(९) नवम रत्न-श्रीजम्बु स्वामी चरित -)॥

(१०) दशम रत्न-"जम्बुकुमार नाटक"—नवम रत्न के चरित्रनायक की कुमार अवस्था का नवरसपूर्ण बड़ा ही रोचक और स्टेज पर खेलने योग्य ड्रामा मूल्य ॥=)

मैनेजर—स्वल्पार्घ ज्ञानरत्नमाला,

बिजनौर (यु० पी०)

(२०) स्थायी जन्तरी)॥। (२१) रौमन उर्दू =)

(२२) सुदामा चरित्र)॥

(२३) "चैतन्य" महोदयका पुराना व नया दोनों चित्र -)॥

(२४) अनमोल क़ायदा (हिन्दी या उर्दू)—त्रिकालवर्ती किसी अङ्गरेज़ी ज्ञात तारीख़ का दिन या ज्ञात दिन की तारीख़ अर्द्ध मिनिट से भी कममें मौखिक (जिह्वाग्र) निकाल सकने की बड़ी सुगम और अद्वितीय विधि, मूल्य १)।

नोट—यह विधि नियत नियमानुकूल शपथ खाये बिना १) लेकर भी किसीको नहीं सिखाई जाती। नियम)॥ का टिकट आने पर या बैरिंग डाकद्वारा मंगाने पर भेजे जाते हैं)॥

(२५) अनमोल विधि नं० २ (हिन्दी या उर्दू)-त्रिकालवर्ती किसी हिन्दी तिथि का नक्षत्र या चन्द्रमा की राशि मौखिक जानने की सुगम विधि, मूल्य =)॥

(२६) रौमन उर्दू-उर्दू जानने वालों को रौमनमें अर्थात् अपनी उर्दू या हिन्दी आदि किसीही भाषाका अङ्गरेज़ी अक्षरों में लिखना पढ़ना केवल ५ या सात दिनमें बिना किसी शिक्षक आदि के बड़ी सुगमता से सिखा देनेवाली बड़ी अमूल्य पुस्तक, मूल्य =) ।

(२७) इलाजुल अमराज़-कुछ रोगोंके अमूल्य चुटकुले। मूल्य)॥

(२८) मौडर्नमेंटल अरिथमेटिक प्रथमभाग मूल्य -)

(२९) तशरीहुलमसाहत प्रथम भाग—नारमल स्कूलों में शिक्षा के लिये और हाईस्कूलों आदि के पुस्तकालयों के लिये इलाहाबाद टैक्स्टबुक कमिटी से स्वीकृत। मूल्य ॥=)।

(३०) उपयोगी नियम (हिन्दी)-गृहस्थ धर्म सम्बन्धी ५.३ क्रिया तथा धार्मिक, नैतिक और वैद्यक शिक्षा सम्बन्धी

५७ सर्व साधारणोपयोगी हर दम कण्ठाग्र रखने योग्य चुने हुए नियमों का शीट, शीशे चोखटे में जड़वाकर बैठक के कमरे में लटकाने लायक। क़ीमत)॥। ।

(३१) जैनधर्म के विषय में अजैन विद्वानों की सम्मतियां (हिन्दी , भाग १, २, मू०)॥, =)।

(३२) संक्षिप्त नित्य पूजा (हिंदी):—यह स्वल्पार्घ ज्ञानरत्न-माला का ११ वां रत्न है जो प्राचीन संस्कृत व भाषा "नित्य नियम पूजाओं" को संक्षेप रूप से मोटे टाइप में प्रकाशित कराया गया है। इसमें (१) विनय पाठ (२) चत्तारि मंगलं आदि पाठ (३) सहस्रनाम का अर्घ (४) देव, शास्त्र, गुरु पूजन (५) २४ तीर्थंकरों, २० विद्यामान तीर्थंकरों, कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालयों, निर्वाण पद प्राप्त सिद्धों, सोलह कारण भावना, दशलक्षण धर्म्म, रत्नत्रय धर्म, पञ्चमेरु के ८० चैत्या-लयों, नन्दीश्वरद्वीप सम्बन्धी ५२ चैत्यालयों, भरत चक्रवर्ती निर्मापित कैलास पर्वत पर की त्रिकाल चौबीसी के ७२ चैत्या लयों, अढ़ाईद्वीप की त्रैकालिक ३० चौबीसी के ७२० तीर्थं-करों; सप्त ऋषियों और निर्वाण क्षेत्रों के अलग २ अर्घ और (६) अन्तमें संक्षिप्त भा० शान्तिपाठ व (७) स्तुति वीनती व प्राथना पाठ आदि का संक्षिप्त संग्रह है । निछावर =) और स्वल्पार्घ ज्ञानरत्नमाला के स्थायी ग्राहकों को उपहार।

उपरोक्त सर्व पुस्तकों के मिलने का पता:—

शान्तिचन्द्र जैन,

वीर प्रेस, बिजनौर (U. P.)

केवल टाइटिल पेज 'वीर प्रेस' बिजनौर में छपा।